पारमार्थिक शिक्षण संस्था में अध्ययनार्थ प्रवेश लेते समय

कुमारी प्रवीणा भाव-मुद्रा में

साध्वी श्री मंजुलाजी
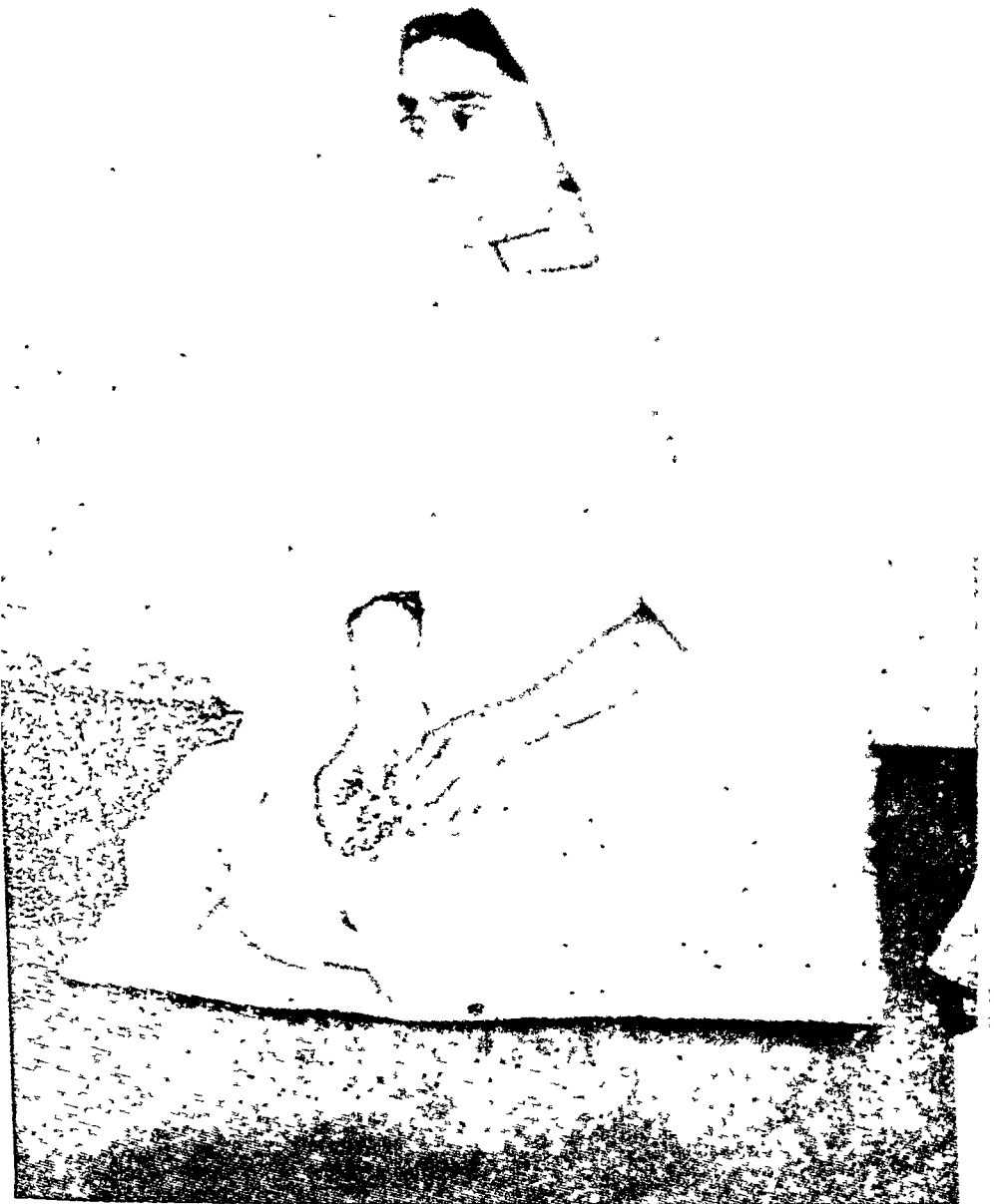
(प्रवीणा की संसारपक्षीया बड़ी बहिन)

जिनका दीक्षा-जीवन प्रवीणा को साधना पथ पर अग्रसर करने में प्रेरणास्रोत बना ।

मृत्यु जो अमृत बनी

(स्व० कुमारी प्रवीणा सेठिया की चामत्कारिक
की सजीव स्मृति)

मुनिश्री किशनलाल
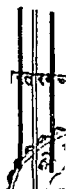
संकलीयता

श्री खुमाणचन्द पटावरी

श्री पूनमचन्द सेठिया

प्रकाशक

कोडामल पूनमचन्द सेठिया

पो० मोमासर

जिला—चूरू (राजस्थान)

प्राप्ति स्थान :—

कोडामल पूनमचन्द सेठिया
पो०—मोमासर
जिला—चूरू (राजस्थान)

*

महावीर वस्त्र भण्डार
महात्मा गांधी पथ
पो०—कटिहार (पुर्णिया) बिहार
फोन नं० २२५

*

मानिकचन्द बछराज
१३, नूरमल लोहिया लेन,
कलकत्ता-७
फोन : ३३-४००७

*

प्रथमावृत्ति ११०० प्रतियाँ
मूल्य—२)००

*

मुद्रक :
रेफिल आर्ट प्रेस
३१, बड़तल्ला स्ट्रीट,
कलकत्ता-७
फोन : ३३-७९२३

भूमिका

सुनते आए हैं कि जीना एक कला है, आनन्द है, किन्तु हमने अपनी आंखों से देखा, मरना एक कला है, जीने से कठिन है। जीवन सब जीते हैं, किन्तु, ऐसे कितने व्यक्ति होंगे जो जीवन को कलापूर्ण जीते हैं, मृत्यु सबकी होती है, किन्तु, ऐसे कितने व्यक्ति हैं जो मृत्यु को कला-पूर्ण बना देते हैं। जैन-साधना पद्धति में अप्रसिद्ध और स्वतंत्र जीवन जीने को महत्त्व दिया गया है। इसलिए भगवान महावीर के समय अनेक साधकों ने साधना की उच्च-भूमि का आरोहण किया। उनका जीवन समता से आप्लावित रहा तो मृत्यु भी समता से परिपूर्ण थी। उन्होंने जीवन और मृत्यु को कोई महत्त्व नहीं दिया। उनकी दृष्टि में समत्व की आराधना ही साध्य है, जीवन और मृत्यु के पार समता-कोष्ट में प्रवेश ही समाधि है।

जहाँ जगत् मृत्यु के नाम से भयभीत और पीड़ित बनता है, वहाँ जैनाचार्यों ने मृत्यु को महोत्सव बनाया। उसके लिए बड़े बड़े ग्रन्थों की रचना की। भगवती-मूला, आराधना, मृत्यु-महोत्सव आदि ग्रन्थ मृत्यु-महोत्सव की तैयारी में साधक का महत्त्वपूर्ण योगदान करते हैं। जैन तीर्थङ्करों एवं साधको के जीवन की हजारों घटनाएं इसकी साक्षी है।

प्रवीणा ने बचपन को पारकर किशोरावस्था में प्रवेश किया था। साधना के संस्कार पारिवारिक वातावरण से निर्मित बने किन्तु उसकी साधना में नैसर्गिक रुचि थी। प्रारम्भ का काल उसका बाल चपलता

पूर्ण था। साधक, साधु-साध्वियों के सान्निध्य एवं अमित उत्प्रेरणा की दृष्टि ने उसके जीवन को परिवर्तित कर दिया। वह एक संकल्प से आगे बढ़ने लगी। उत्तरोत्तर उसके विकास में गति आने लगी। उसकी इस गति में अदृश्य के संकेतों ने चार चाँद लगा दिए। वह आगे लक्ष्य की ओर प्राण-प्रण से बढ़ने लगी।

उसकी डायरी के पृष्ठ इन घटनाओं के साक्षी हैं, एक बालिका अपने संकल्प से किस प्रकार जीवन विकास कर सकी। इस छोटे जीवन में कोई अलौकिकता तो नहीं, लेकिन उसकी मृत्यु ने अवश्य एक अलौकिकता उत्पन्न कर दी, जिसकी चर्चा स्वयं आचार्य श्री तुलसी एवं उनके विद्वान शिष्यों ने की है।

श्रद्धा-सौरभ में साधु-साध्वियों, श्रावक-श्राविकाओं के अन्तरंग से निकले हुए स्वर हैं।

जीवन किरण में उसके जीवन का संक्षिप्त गद्य-पद्यमय जीवन है।

श्री खुमाणचन्दजी पटावरी एवं श्री पूनमचन्दजी सेठिया का अत्याग्रह था कि मैं इसके लिए दो शब्द लिखूं। साथ ही बहिन प्रेक्षणा के उस समाधि के प्रति मेरे मन में सात्त्विक आल्हाद था। मेरी चेतना आज भी उस वृत्त के स्मरण मात्र से रोमांचित हो उठती है। ऐसी पवित्र आत्मा के जीवन-वृत्त से कोई चैतन्य जग जाय, इसी पावन उद्देश्य को ध्यान में रख मैंने उनके आग्रह को स्वीकृति दे दी।

साधना-सत्र, लाडनूं — मुनि किशनलाल

२९ मई १९७२

प्रकाशकीय * * *

बाल्यावस्था के चांचल्यमान जीवन को परिलक्षित कर भला कौन कल्पना कर सकता था कि चम्पा न. केवल प्रवीणा ही बन जायेगी अपितु विश्व इतिहास के पृष्ठों में स्वर्णाक्षरों में एक अविस्मरणीय साधिका के रूप में अंकित हो जायेगी। उसके जीवन का हर पहलू अद्वितीयता से प्रतिभासित था। मृत्यु का पूर्वाभास उसकी साधना का एक ज्वलन्त प्रतीक था। काश! उसकी अन्तिम इच्छा 'भागवती-दीक्षा' भी परिपूर्ण हो जाती तो चार चाँद और लग जाते। लेकिन ऐसा न हुआ। लेकिन 'दीक्षा' आ जाना ही उतना महत्वपूर्ण नहीं जितना उसकी 'आत्म-रमणता' का यह विस्मय-बोधक दृष्टान्त रहा है।

लोग कहते हैं प्रवीणा चली गई, हम कहते हैं वह अमर बन गई है। उसकी जीवन पुस्तक को नजदीक से, तन्मयता से पढ़कर व्यक्ति उसे अपना आदर्श मानता रहेगा। यह पठन-सामग्री एतदर्थ ही प्रस्तुत की गई है।

प्रवीणा के जीवनोद्दान से संस्मरणों के श्री कान्ति सिंघवी, श्रीनाथूलाल जैन, श्री शंकर सोनी एवं श्री भंवर सोनी का जो सहयोग मिला एतदर्थ हम उनके आभारी हैं। मुनिश्री किशनलालजी ने तो 'मालाकार' की मुख्य भूमिका अदा की एतदर्थ हम जीवन भर आभारी रहेंगे।

यह प्रकाशन यदि एक व्यक्ति के भी जीवन को आलोकित कर सका तो हम अपना प्रयत्न सफल समझेंगे।

—पूनमचन्द सेठिया

अनुक्रमणिका

क्रमांक	विषय	संख्या

कुमारी प्रवीणा के पिताजी

स्वर्गीय श्री कोडामलजी सेठिया

कुमारी प्रवीणा की पुज्यनीया माताजी
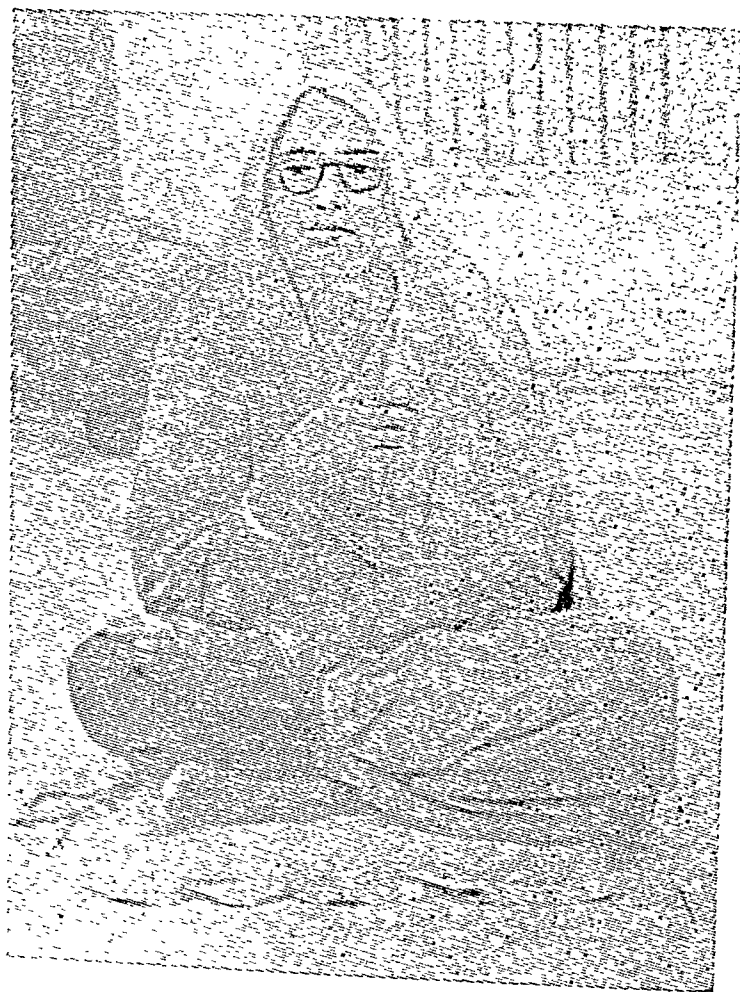
श्रीमती चन्द्रावल देवी सेठिया—जिनकी स्नेहसिक्त गोद में प्रवीणा फली फूली एवं बड़ी हुई।

जीवन शतदल

चामत्कारिक समाधि मृत्यु

—युगप्रधान आचार्य श्रीतुलसी

मेरी सहज प्रकृति है कि स्वप्नों, देवी-देवताओं की घटनाओं व ज्योतिषियों की बातों पर अधिक विश्वास नहीं करता। मध्यस्थ-वृत्ति से कोई कुछ कहता है तो सुन लेता हूं, पर, उसे विशेष महत्व नहीं देता, क्योंकि मुझे पुरुषार्थ पर अधिक विश्वास है। मेरी मान्यता रही है कि निमित्त कोई भी बन सकता है, पर अन्ततः व्यक्ति का पुरुषार्थ ही उसे लक्ष्य तक पहुंचाता है।

स्वर्गीय बहिन प्रवीणा ने बड़े साहस के साथ अपनी सारी स्थिति मेरे सामने रखी, पर, अपनी सहज प्रकृति के अनुसार मुझे उस पर सहसा विश्वास नहीं हुआ। विश्वास होता भी कैसे? जबकि उसका कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं। मैंने सोचा कि बहिनों की यह सहज आदत होती है कि स्वप्नों की सभी बातों को प्रायः सत्य मान लेती हैं। संभवतः इसे भी कोई स्वप्न आया हो; पर कल की घटना से मेरे विचारों में थोड़ा परिवर्तन आया है। सोचता हूं कि बहिनों की हर बात पर इतना अविश्वास नहीं करना चाहिये।

मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि बहिन प्रवीणा ने समाधि मरण को प्राप्त किया है। मृत्यु के बाद भी उसके चेहरे की आकृति यह नहीं कह

रही थी कि वह जीवित नहीं है। उसके चेहरे पर सहज झलकने वाली सौम्यता व शान्ति देखकर मेरा मन बहुत ही प्रभावित हुआ। वह सौभाग्यशालिनी थी, जिसे ऐसा समाधि मरण प्राप्त हुआ। संसार में कुछ ऐसी विरली ही आत्माएं होती हैं, जो इस प्रकार के समाधि मरण को प्राप्त करती हैं। जैन-दर्शन में ऐसी मृत्यु को महोत्सव कहा गया है। पर, मुझे इस बात का खेद है कि समय रहते मेरे पास वास्तविक स्थिति नहीं आ सकी; अन्यथा मैं उसकी दर्शन की अन्तिम इच्छा पूरी करता।

कुमारी प्रवीणा की मृत्यु को मैं पुण्य मृत्यु मानता हूं। क्योंकि उसने साधु जीवन स्वीकार किए बिना ही समाधि-मरण को प्राप्त किया। इसलिये इसकी मृत्यु के पीछे किसी प्रकार का शोक-संताप करने की अपेक्षा नहीं है। प्रश्न हो सकता है कि उसकी तीव्र भावना के बावजूद भी उसे दीक्षित क्यों नहीं किया गया। आप जानते हैं कि दीक्षा चरित्र मोहनीय कर्म का तीव्र क्षयोपशम से ही आती है, जबतक चरित्र मोहनीय कर्म के तीव्र क्षयोपशम नहीं होता है; तबतक तीव्र भावना के रहते हुये भी साधु पर्याय नहीं आती। पर उसकी तीव्र भावना को देखकर लगता है कि दीक्षा न आने पर भी स्यात् उसको भाव चारित्र आगया हो।

पारमार्थिक शिक्षण संस्था के इतिहास में आज एक नया अध्याय जुड़ गया है। मैं जानता हूं वास्तव में ही यह संस्था पुण्यशालिनी है, जहां बीसों तीसों बहिनें अहर्निश आत्म-साधना के लिये तत्पर रहती हैं। इसके साथ ही संस्था के व्यवस्थापक व कार्यकर्त्तागण भी कम सौभाग्यशाली नहीं हैं, जिन्हे आत्म-साधना में रत ऐसी बहिनों की सेवा व सहयोग का अवसर मिलता है। निसंदेह ऐसी घटना कट्टर नास्तिकों के दिलों में भी प्रश्न चिन्ह पैदा करने वाली है। आत्मा;

परमात्मा, कर्म, पुर्नजन्म आदि जिन तत्वों को नास्तिक लोग केवल कल्पना व भोली जनता को बहलाने का एक प्रपंच मानते हैं, वे तत्व ऐसी घटनाओं के माध्यम से जनता के लिए सहज श्रद्धाजन्य हो जाते हैं। तेरापन्थ धर्म संघ अत्यन्त सौभाग्यशाली धर्म संघ है। इसके इतिहास में ऐसी अनेकं घटनाएं भरी पड़ी हैं जो सारे आध्यात्मिक जगत को एक नया आलोक प्रदान करती हैं। हमें बहुत बहुत नाज है, अपने सुनहले इतिहास और गौरवशाली परम्परा पर। कुमारी प्रवीणा की घटना ने इसी शृंखला में एक कड़ी और जोड़ दी है।

तेरापथ धर्म संघ के आद्य प्रवर्तक आचार्य भिक्षु के हम चिर ऋणी हैं, जिन्होंने हमें यह दिव्य पथ दिखाया है। हमारा और आप सब का यह परम कर्तव्य है कि देवगुरु व धर्म के प्रति दृढ़ आस्थावान रहते हुए उस दिव्य-पथ पर अपने चरण बढ़ाएं।

● दि० ४ अगस्त, १९७१ को लाडनूं (राजस्थान) में आयोजित स्मृतसभा के अवसर पर प्रदत्त प्रवचन।

ध्यान का जीवन और ध्यान में मृत्यु

—मुनिश्री नथमलजी

प्रवीणा के जीवन की कहानी चंचलता से स्थिरता की कहानी है। वह प्रा० शि० संस्था में साधना करती थी । उसका प्रारम्भिक जीवन चंचल था। जहाँ चंचलता होती है, कुछ भूलें भी हो जाया करती हैं। स्थिरता में कोई भूल नहीं होती। शान्त जीवन में कोई भूल नहीं होती। उसने नया मोड़ लिया। चंचलता स्थिरता में बदल गई। जीवन स्थिर, शान्त हो गया। यह क्यों हुआ, इसका उत्तर देना कठिन है। फिर भी घटनायें बताती हैं कि कोई निमित्त बना है और वह निमित्त इस लोक से भिन्न प्रकार की सत्ता है। उसे कुछ आभास हुआ और जीवन में मोड़ आ गया। उसने ध्यान की दिशा में अपने चरण बढ़ाये। काफी लम्बे समय तक ध्यान करने लगी। जो व्यक्ति ध्यान में लग जाता है उसका जीवन बाहर से ही नहीं, भीतर से भी बदल जाता है। उसके जीवन में जो परिवर्तन हुआ, वह ध्यान की प्रबल साधना से हुआ। उसके जीवन का अन्तिम मास विचित्र घटनाओं से संवलित रहा। वह करने की स्थिति से छूटकर होने की स्थिति में चली गयी। करने की स्थिति यांत्रिक स्थिति होती है, होने की स्थिति मनुष्य की स्वाभाविक स्थिति है। ध्यान की सफलता होने की स्थिति में प्राप्त होती है।

प्रवीणा की मृत्यु को देखकर लगा कि उसने मृत्यु की नहीं, उसकी

मृत्यु हुई। बहुत सारे लोग अपनी मृत्यु अपने हाथों करते हैं। जिनमें तनाव होता है, वे मौत करते हैं और मौत के बाद भी उसके शव पर तनाव के चिन्ह अंकित रह जाते हैं। प्रवीणा का मृत शरीर जीवित होने की प्रतीति करा रहा था। आकृति पर कोई सिकन नहीं थी, कोई तनाव न था। मृत्यु इस बात की साक्षी दे रही थी कि उसने ध्यान का जीवन जिया है और वह ध्यान के क्षणों में ही शरीर से मुक्त हुई। ऐसे क्षण विरल व्यक्तियों के जीवन में ही आते हैं।

—*—

मृत्यु जो अमृत बनी

—मुनिश्री किशनलालजी

मृत्यु देहधारी का अनिवार्य धर्म है। वह यथार्थ भी है और ज्ञात भी है, फिर भी आश्चर्य है कि व्यक्ति मृत्यु की स्मृति मात्र से भयभीत है। उससे परित्राण पाने के लिए वह विभिन्न क्रियाओं में संलग्न है। मृत्यु का नैकट्य व्यक्ति के मन में और अधिक जिजीविषा के भाव पैदा करता है। मृत्यु से बचने के लिए वह प्रयत्नशील बनता है, किन्तु उसे यह ज्ञात नहीं कि उसका यह प्रयत्न ही मृत्यु के द्वार में ढकेलता है। उसका अन्त इतना कारुणिक एवं बेहोशी की स्थिति में होता है, जिसकी कल्पना ही दारुण है।

मृत्युंजयी बनने के लिए व्यक्ति सहस्राब्दियों से संघर्ष रत है। आज भी सहस्रों वैज्ञानिक अमरत्व के लिये सतत प्रयत्नशील हैं। उनकी खोज और प्रयोगों से जीवन की अवधि का कुछ विकास अवश्य हुआ है, किन्तु मृत्यु पर विजय नहीं पायी जा सकी। जिन क्षेत्रों में जीवन की अवधि का विकास हुआ है, वहाँ भी व्यक्ति एक अवस्था के पश्चात अपने जीवन की सार्थकता का अनुभव नहीं कर पाता है।

मृत्यु एक तथ्य है। जन्म और मृत्यु दो नहीं, एक ही वस्तु की दो स्थितियाँ हैं। जन्म मृत्यु का आदि क्षण है, तो मृत्यु जन्म का शुभा-

रम्भ है। मृत्यु को मिटाने के लिए जन्म को ही मिटाना होता है। जैन विचारधारा ने जन्म और मृत्यु दोनों को दुःख माना है, दोनों का उन्मूलन ही मुक्ति का आधार है।

व्यक्ति ही नहीं विश्व का प्रत्येक दृश्य-पदार्थ मरण धर्मा है। एक अवधि के पश्चात वह जीर्ण-शीर्ण हो जाता है। व्यक्ति इस जीर्ण-शीर्ण शरीर के प्रति विमूढ़ बन जाता है। इस विमूढ़ता के कारण ही वह जन्म और मरण को बार-बार स्वीकार करता है। फिर भी अमरता का एक सत्य उसमें स्फुटित होता रहता है। जो उसकी चेतना का स्वरूप है, वह अमिट लौ अहर्निश प्रज्ज्वलित रहती है। मृत्यु और जीवन के बीच चल रहे इस संघर्ष में अमरत्व ही अंत में विजयी होता है।

अमरता का यह स्वर उसके प्रत्येक श्वास एवं पुण्य में स्पंदित होता रहता है। प्रवीणा की मृत्यु अमरता की सच्ची कहानी है। जिसने अपने छोटे से जीवन को जिस साहस से जिया और मृत्यु का भी साहस से वरण किया,वह अपने आप में एक अद्भुत प्रेरणा है।

उसका बचपन स्वच्छ नीले आकाश के तले सुनहले बालू के विराट टीबों से घिरे एक छोटे से ग्राम मोमासर में व्यतीत हुआ। गांव की भोली भाली जनता की निश्चल भक्ति और उदार व्यवहार का उसके जीवन पर प्रभाव था। वह दूसरों की शारीरिक एवं मानसिक सेवा करने में तत्पर रहती। अपने अध्ययन का परित्याग कर दूसरों की सेवा और अध्यापन के लिए सजग रहती।

प्रवीणा का व्यवहार निश्छल एवं अभयपूर्ण था। सहनशीलता उसमें कूट-कूट कर भरी थी। किसी अप्रिय घटना को भी मधुरता से पीना उसके लिये सहज था। मद्रास यात्रा के मध्य उसका स्वास्थ्य बिगड़

गया। औषधोपचार के पश्चात् भी स्वस्थ नही हो रहीं थी। लम्बे अस्वास्थ्य ने उसके स्वभाव में परिवर्तन कर दिया। स्वास्थ्य लाभ के लिए वह मोमासर आई। कटिहार (विहार) में भी चिकित्सा करवाई। उससे कुछ परिवर्तन आया, लेकिन इससे उसे एक वर्ष से अधिक पा० शिक्षण संस्था से पृथक रहना पड़ा। धार्मिक अध्ययन में कुछ व्यवधान हुआ किन्तु इस समय में वह १० वीं कक्षा की परीक्षा देकर उत्तीर्ण हो गई। इससे उसे अनेक लोगों के ताने भी सहने पड़े किन्तु वह सब को शांतभाव से एवं मधुरता से उत्तर देकर शांत कर देती। अपने साधना मार्ग को प्रशस्त करती हुई आगे बढ़ती रही।

स्वास्थ्य-लाभ कर वह पुन. संस्था में आ गई। अपना अध्ययन सम्यक्तया करने लगी। यह समय उसके जीवन में विशेष परिवर्तन करने वाला था। सुजानगढ़ में मुनि रूघलालजी का स्वर्गवास हो गया था। उनके मृत शरीर को देख वह रोमांचित हो उठी। रात्रि में उसे कुछ अदृश्य संकेत मिले। उससे प्रेरित हो वह ध्यान आदि की साधना में विशेष रूप से लग गई। तब से उसके जीवन में एक विशेष परिवर्तन परिलक्षित होने लगा। अतीत और वर्तमान के दो चित्र साक्षी हैं।

मद्रास में मोमासर से एक पत्र आया कि तुम्हारी माताजी को मृत्यु हो गई। एक पुत्री के मानस में अपनी माता की मृत्यु से क्या स्थिति होती है, वह पुत्री ही जान सकती है। प्रवीणा अभी सद्य साधिका थी, उसका मोहावरण अभी छिन्न नहीं हुआ था, वह उदास थी, आंखों में ममत्व छलकने लगा। वह मन ही मन विपन्न थी। पर, संदेह भी होता था क्यों कि परिवार के किसी अधिकारी व्यक्ति की लिपि उसमें नहीं थी। वह पत्र लेकर मेरे पास आई। उस पत्र की लिपि और शैली पर ध्यान दिया गया तो उस संदेह की पुष्टि हुई, किन्तु, मृत्यु की घटना को असत्य कैसे कहा जाए? "मृत्यु और जीवन एक चक्र है, उसमें सम रहने

का ही भगवान् महावीर ने उपदेश दिया है।" मैं भगवान् के उपदेश का असर उसके चेहरे पर देख रहा था, फिर भी उसकी आंखों में माता के ममत्व की स्मृति स्पष्ट देखी जा सकती थी। मैंने इस वृत्त को बदलते हुए कहा—प्रवीणा! कहीं तुम्हारी परीक्षा के लिए तो यह नहीं किया गया है? तुम्हारा वैराग्य और अनुराग कितना गहरा है? वह मौन अपने स्थल पर लौट गई।

दूसरे दिन ही माताजी का सुख संवाद लेकर दूसरा पत्र आया। वह उस पत्र को पढ़कर प्रफुल्ल थी। उसकी दोनों स्थितियां मेरे मानस में एक संकेत छोड़ गई।

दूसरी बार फिर पड़िहारा से मां की मृत्यु का संवाद लेकर एक पत्र आया। प्रवीणा ने उसे पढ़ा। आज उसके चेहरे पर न गम था और न ही ममता की रेखाएं। वह सदा की भांति अपनी कक्षा में अध्ययनार्थ गई। सारे कर्म अनासक्त भाव से करती रही। सायं वंदना के लिए आई, तब उसने पत्र का समता भाव से उल्लेख किया। मैं उसके चेहरे पर ममत्व की झलक देख रहा था। दूसरे दिन मोमासर से एक बहिन आई, उसने मां के मृत्यु संवाद सुनाते हुए पत्र दिया। अब भी उसकी स्थिति को देख रहा था। वह शान्त एवं समता में लीन थी। सहसा मेरे मानस में मद्रास की घटना आई, कितना अन्तर था चित्त की स्थिति में। दोनों घटनाओं से हम उसके परिवर्तन का अंकन कर सकते हैं।

अदृश्य के संकेत ने फिर उसे सूचित किया। तब छुट्टियों में ध्यान एवं भावना के विशेष प्रयोग करने का संकल्प अभिव्यक्त किया और मोमासर में जाकर ध्यान, आतापना आदि के मनोयोग से प्रयोग किए। उसमें उसकी आस्था सुदृढ़ बनी। इन प्रयोगों ने उसके जीवन को रूपान्तरित कर दिया। वह अपनी यात्रा की तैयारी सजगता से कर रही थी।

उसके समक्ष मृत्यु के संकेत स्पष्ट थे, लेकिन उसने मृत्यु के समय को अमृत संकेत समझा और अपनी भावना को अधिक प्राणवान बनाया। एक-एक क्षण वह साक्षी भाव से जी रही थी। उसकी तितिक्षा एवं धैर्य मानस को रोमांचित कर देता है।

मृत्यु के अंतिम दिवस में भी वह साम्ययोगी की तरह समता में लीन थी। कर्मयोगी की तरह निष्काम-भाव से कर्म में लगी हुई थी। सामान्य दैनिक कर्म भी उसकी मेधा से, समता से पूर्ण हो रहे थे। मृत्यु के पश्चात् जो वस्त्र पहनाए जाते हैं उनको भी सन्दूक से बाहर रखें और बहिनों को बता दिया। अंतिम क्षण तक उसने जिस समता से जिया, वह उसके पार्थिव शरीर पर भी स्पष्ट प्रतिभासित हो रहा था। उसकी देह मृत हो चुकी, किन्तु, चेतना अमृत से आप्लावित हो गई। उसके चारों ओर जो कुछ विकीर्ण हो रहा था, उससे आने वाला एक अद्भुत् शान्ति से भर जाता। प्रवीणा के चैतन्य ने अपनी दीर्घ यात्रा का प्रारम्भ किस भाव दशा में किया उसका प्रतिबिम्ब उसके शरीर पर देखा जा सकता था। मैं कुछ समय उसकी शांत आकृति को देखता रहा। आज भी वे क्षण मेरी आंखों के सम्मुख तैरते हैं तो प्राण प्रेरणा से भर जाते हैं। काश! मैं भी इस प्रकार समाधिस्थ बनूंगा।

—:—

एक विचित्र मौत

•

—साध्वी प्रमुखा श्री कनकप्रभाजी

संसार के सब प्राणी यायावर हैं। उन्हें निश्चित अवधि के बाद एक यात्रा पर जाना ही होता है। जाना निश्चित है, फिर भी उसके लिए योजना बद्ध तैयारी नहीं होती, क्योंकि उस यात्रा का समय और स्थिति अज्ञात रहती है। कुछ व्यक्तियों को समय का पूर्वाभास हो जाता है, फिर भी सहसा उस पर विश्वास नहीं होता। जिनको विश्वास हो जाता है वे किसी अज्ञात आशंका और भय से विचलित हो जाते हैं, इसलिए अपनी तैयारी करने में सफल नहीं हो पाते। कोई विरला ही व्यक्ति ऐसा होता है जो मौत की चुनौती स्वीकार कर उसकी प्रतीक्षा करे।

अगस्त के प्रथम सप्ताह में एक ऐसी ही घटना घटी। एक अठारह वर्षीया किशोरी ने अपनी समग्र तैयारी के साथ मृत्यु का वरण किया। वह शरीर और मन से पूर्णतः स्वस्थ थी। तीन अगस्त की सुबह उसके व्यवहारों और कार्यों में कुछ विचित्रता थी, किन्तु, उसने अपने सभी कार्य नियमित रूप से किये, इसलिए उस विचित्रता का आभास सबको नहीं हुआ। उस दिन वह विशेष रूप से आत्मस्थ बनना चाहती थी। उसने अधिकांश समय ध्यान स्वाध्याय में बिताया। उसके मन में न भय था और न उत्सुकता। वह शान्त भाव से अपने कार्यों में व्यस्त थी।

उसका जन्म राजस्थान के एक छोटे से गांव 'मोमासर'' में हुआ।

वह बचपन से ही संसार से विरक्त थी। वह साध्वी बनना चाहती थी। साध्वी जीवन का पूर्ण प्रशिक्षण पाने के लिए वह पारमार्थिक शिक्षण संस्था में रही थी। संस्था में प्रवेश पाने के बाद उसने साधना और अध्ययन के क्षेत्र में अच्छी प्रगति की। प्रारम्भ में उसमें बहुत बचकानापन और चंच-लता थी। उसकी वृत्तियाँ देखकर कुछ व्यक्तियों को यह विश्वास ही नहीं होता था कि वह साधु जीवन के कठोर अनुशासन में रह सकेगी। उसके निकटस्थ सम्बन्धियों ने बताया कि दो साल पहले उसके जीवन का क्रम कुछ दूसरा ही था। किसी घटना विशेष से उसके विचारों में मोड़ आया और उसने अपने आपको बदलने की कोशिश की। अपने जीवन काल में उसने किसी के सामने इस परिवर्तन का उल्लेख नहीं किया, फिर भी उसके व्यवहारों पर उसका प्रतिबिम्ब स्पष्ट परिलक्षित हुआ। परिवर्तन हुआ, पर वह अजीब नहीं लगा, क्योंकि एक अवस्था के बाद प्रायः हर व्यक्ति के विचारों में मोड़ आता है। उससे व्यक्ति के भावी जीवन का दिग् सूचन मिल जाता है। उस परिवर्तन से कोई अतिरिक्त कल्पना नही हुई, किन्तु उसके बारे में कुछ जिज्ञासाएं तब उभरी जब एक चाम-त्कारिक प्रभाव छोड़कर इस संसार से चली गयी।

जिज्ञासा को समाधान देने के लिए उसकी निजी वस्तुओं का निरीक्षण किया गया। एक डायरी में कुछ ऐसे तथ्य उपलब्ध हुए हैं, जिनके आधार पर उसकी साधना और अन्तर्मुखता के बारे में जाना जा सकता है। एक षोडसी किशोरी के सामने भौतिक उपलब्धियों का कितना आकर्षण रहता है, पर उसने सोलह साल की अवस्था में अपने सतरहवें जन्म दिन पर अपनी डायरी में जो लिखा, उसके कुछ अंश यहां उद्धृत किये जा रहे हैं :

"मेरे जीवन में बहुत सी मानवीय घटनाएं घर कर गई हैं। इन्हें निकालने के लिए मुझे कड़े अनुशासन से काम लेना पड़ेगा, क्यों कि

यह मन इतना ढीठ बन गया है कि बार-बार समझाने पर भी नहीं मानता। मुझे मेरे मन से घृणा हो गई है। मन को प्रशस्त बनाने के लिए मैं अपनी वर्षगांठ के उपलक्ष में एक साल के लिये कुछ संकल्प कर रही हूँ—

१ प्रति दिन दो घंटा ध्यान, एक घंटा धूप में, ऐसा नहीं हो सकता तो दूसरे दिन नमक नहीं खाना।

२ प्रतिदिन आधा घंटा आत्मावलोकन करना।

३ ,, दो घंटा मौन करना।

४ ,, दो घंटा समय छोड़कर पानी के अतिरिक्त कोई भी वस्तु नहीं खाना।

५ ,, भोजन में सत्तरह प्रकार की वस्तुओं से अधिक नहीं खाना।

६ प्रति सप्ताह यह चिंतन करना कि मेरा ध्येय क्या है? मुझे किस मार्ग पर चलना है तथा मैं किस मार्ग की ओर जा रही हूँ?

७ निर्ममत्व भावना बढ़ाना।

८ अहंभाव से बचने का प्रयास करना।

९ क्रोध की प्रवृत्ति को जहाँ तक बन सके छोड़ने का प्रयास करना। महीने में तीन बार से अधिक क्रोध आ जाये तो एक दिन दूध, दही, घी, मिठाई आदि नहीं खाना।

१० दूसरों की गलती नहीं देखकर उसकी विशेषता देखना। महीने में सात बार से अधिक दूसरों की गलती पर ध्यान चला जाये तो एक दिन एक समय भोजन न करना।

११ उपकारी के प्रति कृतज्ञ रहना ।

१२ अपने शत्रु के साथ मित्रता का व्यवहार करना ।

१३ ग्लान व रोगी की सेवा करते समय घृणा नहीं करना अपितु यह सोचना कि मेरा यह सौभाग्य है, जो मुझे सेवा का अवसर मिला है ।

१४ अपनी गलती सहर्ष स्वीकार करना । गलती बताने वाले के प्रति कोई अनुचित भाव सोचा जाये तो दूसरे दिन प्रहर करना ।

उस डायरी में कुछ संकल्प सूत्र और भी हैं । इन सबका अध्ययन करने पर पता चलता है कि सोलह साल तक उसकी जीवन दिशा अज्ञात थी । साधु जीवन के प्रति उसका आकर्षण था, पर साधना का विशेष लक्ष्य नहीं था । साधना का लक्ष्य बनने के बाद उसकी चंचल वृत्तियों में स्थिरता आने लगी और वह अपना अधिक समय ध्यान, स्वाध्याय और मौन आदि में लगाने लगी ।

साधना के इस नये क्रम में वह रात को दो बजे उठकर एक दो घंटे का ध्यान करती थी । कुछ व्यक्तियों ने उसके आकस्मिक परिवर्तन के बारे में पूछा । उसने बताया कि ध्यान और मौन की विशेष साधना करने वाले साधु–साध्वियों को देखकर मुझे प्रेरणा मिली और मेरा विश्वास हो गया कि अध्ययन के साथ ध्यान-साधना भी आवश्यक है ।

दिनांक १६-४-७१ को सुजानगढ़ में रात्रि के समय उसने एक सपना देखा । वह स्वप्न था या यथार्थ, कहा नहीं जा सकता । पर उसमें उसे एक आवाज सुनाई दी कि नींद में हो या जाग रही हो ? वह अधजगी अवस्था में थी । उसने सोचा, ध्यान का समय हो गया है इसलिए कोई बहिन उठा रही है । वह बोली—"उठ रही हूँ" । उसी समय

एक आवाज हुई—"करना है सो कर ले चार महीने और हैं फिर कुछ नहीं होगा।

उसने ये शब्द सुनकर चारों ओर देखा, पर कुछ दिखाई नहीं दिया, केवल भीनी भीनी महक का अनुभव किया। इस घटना का उसके अवचेतन पर गहरा असर हुआ। १८ और १९ अप्रेल की रात्रि में उसे ऐसा ही आभास फिर हुआ। इससे उसके विचारों में अजीब प्रकार की उथल-पुथल मच गई। मौत उसे आँखों के सामने दिखाई देने लगी। उसके मन में किसी प्रकार की घबराहट नहीं थी। इसलिये उसने कुछ व्यक्तियों को अपनी मनः स्थिति से अवगत करा दिया। उसकी बात पर किसी को भरोसा नहीं हुआ अतः उसे यों ही टाल दिया गया।

वह साधु जीवन जीने के विशेष उद्देश्य से पारमार्थिक शिक्षण संस्था में आई थी। निकट भविष्य में अपनी मृत्यु का आभास होने पर उसने शीघ्र ही साधु-जीवन स्वीकार करने की इच्छा व्यक्त की। पुरुषार्थ मनुष्य के जीवन का निर्माता है, पर उसके साथ नियति का भी योग रहता है। नियति को यह मान्य नहीं था कि वह साध्वी बन जाए। इसलिए उसकी हर बात को बचपना कह कर उपेक्षित कर दिया गया।

सत्ताईस 'अप्रेल' की रात्रि में उसने फिर एक आवाज सुनी। उसके बाद 'मई' में भी कई बार आवाज का आभास हुआ। कई बार सुगन्धि आई और दो-तीन बार कुछ जानी अनजानी आकृतियां भी दिखाई दीं। इन सबका कथ्य एक ही था कि तुम सावधान रहो। चार महीने का समय है। किसी भी समय तुम्हें मौत से मुकाबला करना पड़ सकता है। उसने सब घटनाओं को लिपि बद्ध कर दिखा दिया, फिर भी उसके प्रति किसी को विश्वास नहीं हुआ।

ग्रीष्मावकाश पर वह अपने घर गई। वहाँ से लौटते समय उसने

अपनी माता से कहा—" मां ! तुम सावन तीज त्यौहार पर आचार्य श्री की सेवा में अवश्य पहुंच जाना।" उसने अपने घरवालों के सामने किसी घटना का उल्लेख नहीं किया, फिर भी एक संकेत अवश्य दिया।

दो अगस्त की रात्रि को उसे कुछ आभास हुआ। वह सतर्क हो गई। उसे आवाज सुनाई दी। "तीन अगस्त को बारह बजे हींच आएगी, जिससे तुम बच भी सकती हो और नहीं भी, पर बचने की आशा बहुत कम है। सावधान रहना।" सुबह उठ कर उसने दो बहिनों के सामने उक्त घटना का उल्लेख किया। बहिनों ने उसको सुझाव दिया—लगता है आज का दिन आपके लिए कष्टकर है, इसलिए आप अन्तर्मुख बनिए और अपने भावों की शुद्धि का ध्यान रखिए।

बहिनों का सुझाव उसे अच्छा लगा। उस दिन वह उपवास करना चाहती थी, पर अनुमति नहीं मिली। नाश्ते में उसने कुछ नहीं लिया। दस बजने के बाद थोड़ा सा दूध पिया। इस बीच उसने सदा की भांति अध्ययन किया, पर अध्ययन से छूटते ही ध्यान स्वाध्याय करने लगी। कुछ समय के लिए उसने उपकरण सामग्री का निरीक्षण किया। किसी से जो कुछ लेना देना था वह सब निपटा लिया। कपड़े बदले और किसी संभावित स्थिति की प्रतीक्षा में आत्मस्थ बनने का प्रयास करने लगी।

लगभग पौने बारह बजे उसने पानी मांगा। पानी पीते ही वमन हो गई। इसके बाद वह बैठी न रह सकी। लेटने के बाद उसकी आंखें बन्द हो गई और उसने अपने शरीर में असीम वेदना का अनुभव किया। उसे विश्वास हो गया कि आज मेरे जीवन का अन्तिम दिन है। इसलिए उसने सहज भाव से सबसे क्षमा याचना की।

उस भयंकर पीड़ा की स्थिति में वह शान्त भाव से लेटी रही। उसके

मुंह से उफ तक न निकली। उसके शरीर पर बीमारी का कोई लक्षण दिखाई नहीं दे रहा था, किन्तु उसे हाथ ऊपर नीचे करने में भी कष्ट हो रहा था। एक बार फिर वमन हुआ और उसके साथ शरीर में कम्पन भी हुआ। डाक्टर ने जांच की, पर उसकी समझ में कुछ नहीं आया। उसने हाथ में एक इन्जेक्शन लगाया और कुछ दवा दी। दवा का कोई असर नहीं हुआ, कष्ट बढ़ रहा था। पर उसके चेहरे पर वही शान्ति खेल रही थी। आंखें बंद और शरीर निश्चेष्ट लगता था, वह गहरी समाधि में खो रही थी।

इतना सब होने के बाद भी किसी को विश्वास नहीं हुआ कि यह इसका अन्तिम समय है क्योंकि उसके शरीर पर कोई विकार नहीं था। उसने बार-बार क्षमा-याचना की और आचार्यश्री के दर्शन करने की इच्छा व्यक्त की। उससे पूछा गया कि तुम्हारी माताजी को बुलादें क्या ? उसने इन्कार कर दिया। लगभग २ बजकर ३० मिनट पर उसने कहा— ऊपर चलती हो क्या ? मैं तो ऊपर जा रही हूँ। पांच मिनट बाद उसके मुंह से थोड़ा सा पानी निकला और उसके प्राण-पंखेरू उड़ गए। लगभग पौने तीन घंटे तक वह लेटी रही। न उसने करवट बदली और न हिली डुली। उसके शरीर पर न किसी प्रकार का तनाव था और न मन में व्याकुलता। मुप्त कायोत्सर्ग की अवस्था में उस अठारह वर्षीया किशोरी के प्राण नश्वर-शरीर को छोड़ कर चले गए। उस किशोरी का नाम था " प्रवीणा "। प्रवीणा की निर्जीव देह पर भी अद्भुत शांति थी। लगता था वह अभी बोल पड़ेगी, किन्तु बोलनेवाली आत्मा कहीं अन्यत्र पहुँच चुकी थी।

कुमारी प्रवीणा की यह चामत्कारिक मौत सबके लिए एक आश्चर्य बन गई। कितना साहस था उसमें। जिसने अपनी इस लम्बी यात्रा पर

जाने से पहले पूरी तैयारी की। बहिनों ने बताया कि उसने मरणोपरांत पहनने के वस्त्र भी अपने हाथ से निकाल कर रख दिए। उसने यह भी कहा कि मेरे पारिवारिक लोग मेरी मृत्यु को लेकर किसी प्रकार का शोक न करें। शोक प्रदर्शित करने वाले वस्त्र (हरे वस्त्र) न पहनें और न रोयें।

इन सब तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि उस बहिन को निश्चित रूप से अपनी मौत का पूर्वाभास हो गया। उसने साहस और स्थिरता से उन क्षणों की प्रतिक्षा की और पूर्ण समाधिस्थ हो गई। इस घटना में किसी को अतिरंजित लग सकता है क्योंकि पूर्व घटना क्रम को भी अतिरंजन मानकर ही टाला गया था। किन्तु उसी के द्वारा लिखित चार-मास पूर्व का विवरण और प्रत्यक्ष दर्शकों के अनुभव इस तथ्य की प्रामाणिकता में असंदिग्ध प्रमाण हैं। इस घटना ने कुछ अनास्थावादी व्यक्तियों के दिलों को झकझोर डाला है। जो कुछ घटा वह स्पष्ट है और सत्य है, उसे झुठलाने का हमारे पास कोई आधार नहीं है।

—*—

एक अपूर्व स्मृति

—साध्वीश्री कमलाकुमारी (उज्जैन)

विश्व के रंग मंच पर अनेक प्राणी जन्म लेते है और मरते हैं। कौन किसको याद करता है और कौन किसकी स्मृति में दो आंसू वहाता है? पर कोई विरल आत्माएँ इस धरती पर अवतरित होती हैं जो अपने सदाचारी जीवन की सौरभ को कण-कण में फैलाती हुई जनमानस के बीच अपनी अमिट छाप छोड़ जाती हैं और अपने यशः शरीर से सदा सदा के लिए अमर बन जाती है।

बहिन प्रवीणा भी उन विरल आत्माओं से से एक है जिसने अपने छोटे से साधनामय जीवन से जनमानस को विस्मित ही नहीं किया अपितु एक नया सम्बल और श्रद्धा का अटूट विश्वास भी दिया।

मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि उस महान् आत्मा को इस साधना पथ पर अग्रसर करने का सुअवसर विनय निष्ठा साध्वी श्री हुलासांजी को मिला और यथाशक्ति सहयोग देने का सौभाग्य मुझे भी मिला। उसने अपनी छोटी सी सांझ में जीवन की लौ प्रज्जवलित कर एक नया आलोक दुनिया को दिया, इसकी मुझे प्रसन्नता है।

विनय निष्ठा साध्वीश्री हुलासांजी (सरदारशहर) का मोमासर पदार्पण सं० २०१७ में हुआ। साध्वी श्री के तपोमय जीवन की छाप

उस पर पड़े बिना न रह सकी। वह अपना अधिकांश समय साध्वियों की सेवा में ही व्यतीत करती और अपनी बाल सुलभ चंचल लीलाएँ प्रकट कर साध्वी श्री के सान्निध्य का लाभ पाती।

बचपन से ही उसके चेहरे पर सहज वैराग्य प्रस्फुटित था, जब भी वह हमारे पास बैठती तो ध्यान कैसे होता है, आदि-आदि अनेक बातें पूछा करती थी। घर गृहस्थी से उसे कोई लगाव नहीं था। वह सांसारिक बंधनों में नहीं बंधना चाहती थी। "भरत मुक्ति" काव्य के दोहे ने उसके विरक्त चित्त को और अधिक विरक्त बना दिया।

उसकी उम्र ८-१० वर्ष की थी। एक दिन मध्यान्ह में भरत-मुक्ति काव्य को बड़ी तन्मयता से सुन रही थी, ब्राह्मी-सुन्दरी का प्रकरण चल रहा था उसने बहुत शीघ्रता से पकड़ लिया।

"म्हे नारी किण री नहीं बाजां
सासरे रो नाम लियां लाजां।
म्हानै प्रीतम री परवाह नहीं कोई
म्हें नहीं करावां सगाई॥

यह पद्य उसको इतना प्रिय लगा कि वह हर क्षण हर प्रसंग पर अपने इस दोहे को गुनगुनाती रहती। बड़ी होने पर जब सगाई-विवाह का प्रसंग आता तो वह अपने परिवारवालों के समक्ष नि.संकोच इसी दोहे को सुनाती और शादी करने से इन्कार हो जाती।

एक दिन मैंने उससे पूछ लिया कि तुम बार-बार उस दोहे को यों ही गुनगुनाती हो या उसे अपने जीवन में चरितार्थ भी करोगी? उसने सहजता से स्वीकृति सूचक सिर हिला दिया। उस समय मैंने उसकी स्वीकृति को उसका बचपन ही माना। पर वह उस समय अपने मन में अपने भावी जीवन का निर्णय कर चुकी थी।

एक बार यह जानने के लिए कि मुझे दीक्षा आयेगी या नहीं—एक ज्योतिषी को हाथ दिखाया। हाथ की रेखाएँ देखकर ज्योतिषी ने भविष्य-वाणी की कि १५ वर्ष की उम्र तक संन्यास आये तो आ सकता है अन्यथा मुश्किल है पर तुम्हारा १८ वां वर्ष बहुत ही प्रभावशाली और चामत्कारिक होने वाला है। ज्योतिषी के इस उत्तर से कुछ चिन्तित और कुछ विस्मित होती हुई वह मेरे पास आई। मेरे से वह कितनी विश्वस्त थी मैं बता नहीं सकती। अपनी गुप्त से गुप्त बात भी मेरे सामने रख देती और मेरे से समाधान पाकर संतुष्ट हो जाती। उसने ज्योतिषी की इस भविष्यवाणी का मेरे सामने जिक्र किया और कुछ चिंता व्यक्त की। मैंने आश्वासन के शब्दों में कहा—'तुम चिन्तित मत बनो। ज्योतिषी के कथन पर विश्वास रखो और पुरुषार्थ भी मत छोड़ो। उसने तुम्हारा १८ वां वर्ष प्रभावशाली बताया है तो सोचो कि दीक्षा लिए बिना प्रभावशाली कैसे होगा ? तुम दीक्षा की चिंता छोड़ो और अपनी साधना में रत रहो। दीक्षा का जब समय आयेगा अपने आप मिल जायेगी, इसकी चिन्ता क्या है ?

मेरे शब्दों से उसे शांति मिली। वह अविरल गति से अपनी साधना में संलग्न हो गई थी। ध्यान और तपस्या के प्रति उसे बड़ा आकर्षण था। उसने बहुत छोटी अवस्था में भी अनेक उपवास किये। उपवास के प्रति उसकी जो दृढ़ आस्था थी वह उसे उपवास करने को विवश कर देती थी।

दीक्षा की बलवती भावना जब उसने अपनी मां के समक्ष प्रस्तुत की तो उन्होंने इसकी बाल लीला समझ कर कोई ध्यान नहीं दिया। पर उसके प्रति आग्रह ने आखिर मां से पारमार्थिक शिक्षण संस्था में प्रविष्ट होने की अनुमति पा ही ली। प्रवीणा की मां एक कुशल परीक्षिका है। उसने अपनी बड़ी पुत्री साध्वी मंजुलाजी को बहुत अच्छी तरह से परीक्षा

करके ही पूज्य गुरुदेव के चरणों में समर्पित किया। परन्तु प्रवीणा की परीक्षा लेने में तो उन्होंने हद ही कर दी पर आत्मार्थी प्रवीणा भी अपनी परीक्षा में शत प्रतिशत उत्तीर्ण हुई।

आखिर जो होना होता है वह होकर ही रहता है। ज्योतिपी की वह भविष्यवाणी अक्षरशः सत्य ही निकली। ज्योंही उसने १८ वें वर्प में प्रवेश किया, उसे एक अपूर्व आभास हुआ। एक नई दिव्य ज्योति के दर्शन हुए और वह सदा- सदा के लिए इस लोक से विदा हो गई।

प्रवीणा के श्रद्धा, निष्ठा, साधनाशील और चामत्कारिक जीवन से हम मुमुक्षु आत्माएं भी कुछ आलोक प्राप्त करें इसी आशा के साथ उस दिवंगत आत्मा के प्रति अपनी सहयोगिनी साध्वियों सहित शत-शत शुभ कामना प्रकट करती हूँ कि वह पवित्र आत्मा शीघ्र अपनी मंजिल प्राप्त करें।

—*—

प्रवीणा : सजीव स्मृति

—श्री खुमानचन्द पटावरी

पारमार्थिक शिक्षण संस्था के गौरवमय इतिहास के सुनहरे पृष्ठों पर अंकित स्वर्गीया कुमारी प्रवीणा की जीवन कहानी आज सबकी जुबान पर थिरक रही है। राजस्थान के रेतीले टीलों के बीच जन्मी और पली इस बाला ने अपने जीवन के शिथिल तारों को झंकृत किया। सिर्फ १५ वर्ष की अल्पायु में उसने भौतिक जगत से आध्यात्मिक जगत की ओर मुँह मोड़ लेने का निश्चय किया और वह आचार्य श्री तुलसी की शिष्या बनने की मधुर कल्पनाओं को संयोजित करती हुई पारमार्थिक शिक्षण संस्था में प्रविष्ट हुई। यद्यपि पूज्य पिताजी का वात्सल्य एवं प्यार उसे प्राप्त नहीं हो पाया था, लेकिन ममतामयी मां का दुलार एवं पारिवारिक जनों के धार्मिक संस्कारों से उसके जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन होने लगे। बहिन मोहिनी (साध्वीश्री मंजुबालाजी) की दीक्षा से कुमारी प्रवीणा को और बल मिला।

पारमार्थिक शिक्षण संस्था में उसने शैक्षणिक एवं अन्य दृष्टियों से अपना समुचित विकास करना प्रारम्भ किया। शारीरिक अस्वस्थताएं प्रगति में विघ्न-बाधाएं उपस्थित करती रहीं। जब आचार्य प्रवर दक्षिण यात्रा में थे, उस समय रोटीचावल (मद्रास) में संस्था के प्रवासकाल के दौरान एक अप्रिय घटना घटी। अज्ञात अवस्था में एक कब्र पर पैर रखे

जाने से किसी दैविक शक्ति द्वारा उसे अत्यन्त व्यथित किया जाने लगा। परिणाम स्वरूप साधना में व्यवधान पैदा होते गये। अस्वस्थता को दृष्टि गत रखते हुए उसे समाज भूषण श्री गणवन्तमलजी सेठिया मद्रास ले गये एवं चिकित्सा की समुचित व्यवस्था की। डाक्टरों द्वारा अथक प्रयत्न करने पर भी उपचार असफल रहा। इसलिए हम उसे कटियार (बिहार) ले आये। यहाँ समस्त सुविधायें उपलब्ध होने के बावजूद भी रोग का निदान नहीं हो पाया। एक दिन सहसा उसकी डायरी के पृष्ठों को देखकर रोटीचावल की घटना एवं उसके बाद का प्रसंग ज्ञात हुआ। इस जटिल समस्या को सुलझाने हेतु एक प्रख्यात मंत्रवादी को बुलाया गया। एक ओर आचार्यश्री के प्रति असीम श्रद्धा-बल दूसरी ओर मंत्र-वादी के सफल प्रयासों के आगे अदृश्य शक्ति पराभूत हो गई। पूर्ण स्वास्थ्य लाभ के पश्चात् पुनः शिक्षण संस्था में लौट गई। धीरे धीरे उसके चंचल मानस में यौगिक क्रियाओं से ओत प्रोत मनः स्थितियों में प्रति दिन नव निखार आने लगा। फलस्वरूप उसने शिक्षण संस्था के प्रवास काल में संयम जीवन की पूर्वभूमिका का निर्माण अत्यन्त जागरूकता पूर्वक प्रारम्भ किया। कौन जानता था उसका वह सुरम्य स्वप्न (साधु जीवन प्राप्त करना) केवल स्वप्न मात्र बनकर रह जायगा।

प्रवीणा की मृत्यु के चार महीने पूर्व किसी दैविक शक्ति ने उसे मृत्यु का पूर्वाभाष कराया। भावी (होनहार) के स्पष्ट संकेत उसके धैर्य को विचलित नही कर सके। अनेकों हितैषी दैविक शक्तियों द्वारा उसे (मृत्युकाल सन्निकट है), पुनः पुनः सचेष्ट किया गया। मृत्यु के पूर्वाभाषों की स्पष्ट रेखाएं आज भी उसकी डायरी में चिन्ह हैं। शिक्षण संस्था के संयोजक श्री कल्याणमल जी बरडिया के समक्ष उसने अपनी आन्तरिक भावनाओं को व्यक्त किया। संयोग की बात थी कि उसकी

भावनाओं का विशेष अंकन नहीं किया गया। समय द्रुतगति से बीतने लगा। अन्ततोगत्वा उसका अन्तिम धुंधला प्रभात उदित हो ही गया। उसने अपनी सहपाठिनी बहिनों से क्षमा याचना की। प्रातःकाल गुरुदर्शन के पश्चात उसको हल्का वमन हुआ। अस्वस्थता को दृष्टिगत रखते हुए डाक्टर को बुलाया गया। संयोजक महोदय के पूछने पर उसने अपने संक्षिप्त उत्तर में कहा—मैंने आपको चार महीने पूर्व ही सूचित कर दिया था, वही बात है। और मेरे कोई बीमारी नहीं है। अफसोस उसके इस कथन को भी पूर्णतया उपेक्षित कर दिया गया। आखिर वह अस्वस्थता की चरम सीमा पर पहुँच गई। मरणासन्न स्थिति में भी उसकी आचार्य प्रवर के दर्शनों की उत्कट अभिलाषा पूर्ण नहीं हो पाई, कारण नियति का कुचक्र ही उसकी अभिलाषाओं का व्यवधान बना। मेरा व्यवसाय कटिहार (बिहार) में है। मैं व्यापार निमित उन दिनों बम्बई की ओर गया हुआ था। वहाँ से आचार्य श्री के दर्शनार्थ लाडनूं पहुँचा। संयोग वश पहले दिन बिल्कुल स्वस्थ और दूसरे दिन दिन अस्वस्थ प्रवीणा से अन्तिम मिलन का अवसर प्राप्त हुआ। हमने उसे मृत्यु से उबारने के लिए अनेक प्रयत्न किये। लेकिन सभी प्रयत्न निष्फल रहे। हमारे देखते-देखते २॥ बजे प्रवीणा का देहावसान हो गया। देहावसान हो नहीं गया एक विकास था जो पूर्णता को उपलब्ध हो गया। इस आकस्मिक मृत्यु से जहाँ एक ओर सबके चेहरों पर विषाद की रेखायें अंकित हो रही थीं, वहाँ दूसरी ओर सबके मस्तिष्क उसके प्रति श्रद्धानत थे। बहिन प्रवीणा के दुःखद मृत्यु से मेरे (बहनोई के नाते) अन्तर्मानस में जो असह्य वेदना हुई उसे मैं शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकता। अचार्यवर तथा साधु साध्वियों एवं समाज के विशिष्ट व्यक्तियों के लिए कुमारी प्रवीणा की अकाल्पनिक मृत्यु प्रश्न चिन्ह बन गई।

अभाव में भाव-दर्शन

●

—साध्वीश्री सत्यप्रभाजी

साध्वी श्री हुलासांजी (सरसा) को आचार्य प्रवर ने महती कृपा कर वृद्धावस्था व नेत्रों की कमजोरी के कारण मोमासर-आडसर विचरने का आदेश दिया। उस समय ११ मास मोमासर में रहना हुआ। अस्वस्थता के कारण प्रवीणा को भी वहीं रहना पड़ा। इस अवसर में मैंने उसके जीवन को निकटता से पढ़ा। उसके जीवन में मिलन-सारिता अध्ययनशीलता, साधना की तड़फ तथा साहसिकता आदि अनेक गुण समाहित थे। वह एक वीर कन्या थी। उसके जीवन के कुछ संस्मरण प्रस्तुत कर रही हूं।

अभाव में भाव—

शारीरिक अस्वस्थता के कारण लम्बे समय तक उनको मोमासर में रहना पड़ा। फिर भी उनका मन साधना की अभिलाषा से भरा रहता। बहुत बार कहती रहती—महाराज ! पता नहीं मेरे कौन से निकाचित कर्मों का उदय है कि आचर्य प्रवर की अमूल्य सेवा से वंचित, संस्था की शिक्षा व साधना से वंचित और इधर गांव के कई लोगों के ताने कि संस्था में जाते ही वापिस आ गई है। हम तो पहले ही जानते थे कि यह क्या दीक्षा लेगी? जब की ११-१२ महीनोंसे यहाँ बैठी है आदि आदि इस प्रकार की स्थिति में वह कभी घबड़ाई नहीं उल्टे वह यही

कहती थी कि यह तो मेरी परीक्षा है कि मैं साधना में कितनी सहिष्णु और सम रह सकती हूं। यह भी अपने आप का पुण्योदय मानती हूँ कि साध्वी श्री हुलासांजी (सरदारशहर) का स्वर्गवास होने के बावजूद भी मुझे साध्वी श्री हुलासांजी (सरसा) की सेवा का इस वेला में अनुपम अवसर प्राप्त हुआ। मैंने देखा कि अल्पवयस्क होने के बावजूद भी उसने अनेक प्रकार की परिस्थितियों में भी बहुत बड़े साहस का परिचय दिया।

सरलता से गलती स्वीकार करना—

कार्तिक मास था। बहनों में महासभा की परीक्षा का अध्ययन चालू था। प्रवीणा ने मुझसे कहा—धर्म बोध भाग (३) कृपाकर आप मुझे पढ़ावें। मैंने कहा—आजकल दिन भी छोटे होते है और बहिनों को अध्ययन करवाना है, अतः तुमभी दोपहरमें एक कक्षा को समय दे दिया करो। एक दिन तो आई पर फिर नही। मैंने उपालम्भ की भाषा में कहा—प्रवीणा! तुम तो बड़ी स्वार्थिनी हो क्योंकि स्वयं को पढ़ना होता तब तो मध्याह्न में २-२॥ घंटा सेवा कर लेती हो। जब दूसरों को पढ़ाने को कहा तो दोपहर में आना ही कम कर दिया। उस समय तहत् कह हंसकर टाल दिया। पर उसी दिन रात्रि में कहा—मेरा ध्यान स्वयं के अध्ययन के लिए रहता है उतना दूसरों के लिए नही"। यह थी उसके जीवन की सरलता से गलती को समझने की क्षमता। कुछ दिनों पश्चात् मैंने देखा—उसके विचारों में परिवर्तन आ गया। दूसरों को पढ़ाने में अधिक रुचि लेती।

कृतज्ञता के स्वर—

कहा जाता है कि जो बालक पहले जितना चंचल होता है ठीक वह उतना ही बाद में होशियार होता है। यही स्थिति प्रवीणा की बताई जाती है कि वह बचपन में जितनी उदण्ड व चंचल थी उतनी ही वैराग्य

भावना के बाद विनीत व गंभीर बनी। कृतज्ञता के कण हर बात में झलकते रहे। संस्था की प्रशंसा के साथ ही पंडितजी, मास्टर साहेब (नाथूलालजी) की कृपा को याद करना नहीं भूलती। मोमासर से संस्था में परीक्षा देने गई और परीक्षा के पश्चात् रिजल्ट निकला तब उसने पत्र में लिखा कि "घर पर अध्ययन कर के भी अपनी कक्षामें द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण हुई हूँ यह साध्वी श्री सत्यप्रभाजी की शुभ कृपा का फल है।" अब आप जान सकते हैं कि उसके मन में कितनी कृतज्ञता की भावना थी। उसके मन में अध्ययन की बहुत तड़फ थी। उसको जब भी समय मिलता अपने अध्ययन में जुट जाती। प्रतिपल यही ध्यान रहता कि कहीं मैं यहाँ रहकर अपनी सहपाठिनी बहिनों से पीछे न रह जाऊँ। इसी का फल है कि कक्षा में द्वितीय स्थान प्राप्त किया।

एक चमत्कार—

हम रामगढ़ में चातुर्मास कर रही थीं। श्रीचन्दजी लूनियां आचार्यश्री की सेवा में लाडनूं गए हुए थे। दिनांक ५-८-७१ को मध्यान्ह का समय था, उस दिन मेरे पंचोला था। श्रीचन्दजी का पत्र आया, मैं तत्काल उठी क्योंकि आचार्यवर के सुखसाता के समाचारों के लिए बहुत दिनों से प्रतिक्षा थी। पत्र में एकाएक प्रवीणा के इस अनूठे चमत्कार के साथ दिवंगत होने की बात पढ़ी। मन को जल्दी से विश्वास तक नहीं हुआ। चिन्तन में अनेक उतार-चढ़ाव आए, क्या प्रवीणा नहीं रही? आदि-आदि।

दूसरे दिन मैं पारणें की तैयारी में थी। प्रति लेखन कर के हम बाहर के कमरे से अन्दर की तरफ जा रही थी। इतने में सबने देखा-प्रवचन के स्थान में यानि चौक में लगभग ३०-३५ जगह से स्थान चिकना था, जबकि वहाँ चिकनेपन का कोई प्रसंग तक नहीं था। साध्वियों ने विनोद

को भाषा में कहा कि प्रवीणा तुम्हारी बहुत सेवा करती थी अतः तुम्हारे पारणें में घृत की वर्षा की है। चाहे कुछ भी हो पर सबने देखा कि वह चिकनापन ४-५ रोज तक बना रहा।

प्रवीणा का जीवन सचमुच में ही एक आदर्श जीवन था। अल्पावस्था में भी बहुत बड़े साहस का परिचय दिया। उसने अपनी साधना के द्वारा ऐसी लौ प्रज्वलित की जो युगों तक इतिहास में चमकती रहेगी और दूसरों के लिए प्रेरणा स्रोत बनी रहेगी।

—*—

अविस्मरणीय वृत्त

●

श्री कल्याणमल बरड़िया
संजोयक–श्री पारमार्थिक शिक्षण संस्था

मोमासर निवासी स्व० कोड़ामलजी सेठिया की सुपुत्री सुश्री चम्पा कुमारी ने मिति श्रावण शुक्ला ४ सं० २०२५ वि० को जोधपुर आकर श्री पारमार्थिक शिक्षण संस्था में साधना हेतु प्रवेश लिया। संस्था में उसका नाम परिवर्तित कर प्रवीणा कुमारी रखा गया था। प्रारंभ में उसमें बाल सुलभ चांचल्य था। किन्तु अध्ययन-अध्यापन और कार्य-व्यवहार से वह एक प्रतिभा सम्पन्न बालिका प्रतीत होती थी। उसका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता था, इसलिए दूसरे वर्ष उसे स्वास्थ्य सुधार के लिए घर रहना पड़ा। गत वर्ष २ जनवरी ७२ को वह पुनः संस्था में आगई।

२१ अप्रेल ७१ को आचार्य श्री छापर पधारे। संस्था का प्रवास भी वहीं था। संभवतः २२ अप्रेल ७१ की बात है, प्रवीणा ने मेरे हाथ में एक कॉपी दी और मौन खड़ी रही। मैंने कहा—"क्या बात है?" उसने कहा—"पढ़ लीजिए"। कॉपी में दिनांक १६, १८ और १९ अप्रेल को सुजानगढ़ में उसे मिले 'अदृष्ट-संकेतों' का विवरण लिखा था और साथ में एक निवेदन किया गया था। मुझे उसकी बातों पर विश्वास नहीं हुआ। स्वपनों की बातों पर विश्वास न करने की शिक्षा देते हुए मैंने उसे इस प्रकार की बातों का जिक्र अन्य बहनों से न करने का संकेत भी दिया।

दो तीन दिन पश्चात् मैंने वह पत्र आचार्यश्री को निवेदित किया। आचार्यश्री ने उसके सम्बन्ध में मेरी सम्मति जाननी चाही। मैंने निवेदन किया "टाबर है, स्वप्नों की बातों पर विश्वास कैसे किया जाय?" आचार्यश्री को विश्वास होने का कोई प्रश्न ही नहीं था।

संस्था १७ मई १९७१ को पड़िहारे में थी। प्रवीणा के नाम का एक पत्र मिला, जिसमें उसकी मां के स्वर्गवास होने की सूचना थी। प्रवीणा को मां की मृत्यु की सूचना सुनकर शोक नहीं हुआ जैसा कि उसे पहिले मद्रास में इसी प्रकार की मिथ्या सूचना पाकर हुआ था। वह गंभीर और प्रकृतिस्थ बनी रही। २० मई को ग्रीष्मावकाश में वह अपने घर मोमासर चली गई।

ग्रीष्मावकाश पश्चात् निश्चित समय पर संस्था खुली और वह लाडनूं संस्था में आ गई। इस बार उसकी रुचि ध्यान स्वाध्याय में विशेष रूप से देखी गई। पूर्व अपेक्षा उसके स्वभाव और व्यवहार में भी शालीनता की झलक दृष्टि-गोचर होती थी। वार्षिक परीक्षा में उसने प्रथम श्रेणी के अंक प्राप्त कर अपनी प्रखर-प्रतिभा का प्रमाण दिया था।

३ अगस्त ७१ को जो घटना संस्था मे घटित हुई वह अभूतपूर्व और अविस्मरणीय थी। साथ ही संस्था के इतिहास में प्रथम घटना थी। अनुमानतः ११। बजे मुझे सूचना मिली कि प्रवीणा की तबियत ठीक नहीं है। मैं ऊपर जाता हूँ और देखता हूँ कि प्रवीणा लेटी है। अभी-अभी कुछ देर पहिले ही वह सामायिक से निवृत्त हुई थी और पानी पिया था। उसे वमन भी हो गया था। कुछ घूम आनेके कारण वह लेट गई थी, मेरे पहुँचते ही उसने कर-बद्ध प्रणाम करते हुए कहा-"संयोजक सा! मेरे कोई बीमारी नहीं है। वही बात है जो चार मास पूर्व मैंने आपको लिख कर दी थी, और फिर मुझे से क्षमायाचना करते हुए आँखें बन्द करली, मैंने समझा

जी घबराने लग गया है—तत्काल डाक्टर को बुलवा इंजेक्शन लगवाया, दवा दी गई। डाक्टर ने कहा–घबराने जैसी कोई बात नहीं है। प्रवीणा ने आचार्यश्री के दर्शनों की इच्छा व्यक्त की। तीन बहिनों को आचार्यश्री के पास भेज निवेदन करवाया, किन्तु दर्शन का लाभ प्राप्त नहीं हो सका। प्रवीणा के बहनोई श्रीखुमाणमलजी पटावरी भी इस प्रसंग पर वहीं उपस्थित थे।

बहिनों द्वारा मुझे ज्ञात हुआ कि प्रवीणा को रात में संकेत हुआ है जिसमें उसे १२ बजे मध्यान्ह 'हींच' के साथ निधन होने की सूचना मिली है। प्रवीणा ने आज प्रातः से ही 'मृत्यु-महोत्सव' की समस्त तैयारियाँ ठीक करली है और सब बहिनों से क्षमा-याचना कर अपने को निश्चित सा बना लिया है। मुझे फिर भी विश्वास नहीं हुआ, कारण प्रवीणा मेरी आँखों के सामने भली प्रकार लेटी हुई थी, उसके मुख पर अपूर्व शान्ति झलक रही थी, वह ऐसी लग रही थी मानो ध्यान-मुद्रा में आत्म-रमण कर रही हो। मैं दवादि देने की व्यवस्था कर नीचे कक्ष में आ गया।

१॥ बजे मैं ऊपर गया। वह शान्त थी। साध्वियों ने दर्शन दिए, मंगल-पाठ सुनाया, उसने विवेक और श्रद्धा पूर्वक सुना, लगभग २॥ बजे उसे एक 'हींच' तनावपूर्ण दौरा आया और मेरे देखते-देखते वह स्वर्ग सिधार गई। उस क्षण मेरी मनःस्थिति जो बनी उसका वर्णन करना शब्दातीत है।

रात को संस्था-सदस्यों और बहिनों ने एक स्मृति सभा की। बहिन प्रवीणाके हाथ की लिखी एक डायरी को कु०सुशीला द्वारा सुनाया गया। डायरी में उन स्वप्न-संकेतों का उल्लेख किया गया था, जो प्रवीणा को छापर, पडिहारा और मोमासर में हुए थे। डायरी की बातों को सुनकर मुझे पूरा विचार हुआ—काश ! अन्त समय तक भी उसकी दीक्षा की उत्कट मनोकामना पूरी होती !

प्रवीणा आज हमारे बीच नहीं है, किन्तु उसकी स्मृति अब तक आंखों के सामने है। संस्था के अल्प साधना-काल में उसने अपना जीवन क्रम जिस प्रकार परिवर्तित किया वह संस्था के लिए गौरव की बात है। जब मैं उसके प्रथम और अन्तिम संस्था-जीवन की तुलना करता हूं तो पाता हूँ कि वह एक आत्मार्थी व वैराग्य-निष्ठ आत्मा थी। उसने मरणान्तिक वेदना को समता-पूर्वक सहन कर विवेक-ख्याति और निर्ममत्व भावना का परिचय दिया। मरणोपरान्त भी वह ध्यानावस्था की मुद्रा में लगती थी। आचार्य प्रवर ने अपने प्रवचन में उसकी मृत्यु को पुण्य-मृत्यु और प्रवीणा को सौभाग्यशालिनी बताया तथा संस्था के प्रति भी गौरव-पूर्ण उद्गार व्यक्त किए। गुरु चरणों में चित्त को स्थिर कर विशुद्ध परिणामों में हुई उसकी मृत्यु वास्तव में अनुकरणीय और अविस्मरणीय है।

—०—

दीप बुझ गया : ज्योति अमर बन गई !

—कुमारी सुशीला (पा० शि० सं०)

राजस्थानान्तर्गत लघु किन्तु पवित्र ग्राम मोमासर के दीवट पर एक अनोखा दीप जला था, जो अल्पकाल में ही टिमटिमा कर बुझ गया, पर, उसकी ज्योति अमर बन गई, जो जन-जन का प्रकाशस्तम्भ बन सकेगी।

मोमासर के स्वच्छ, सुरम्य उद्यान में एक कली पूर्णतः पल्लवित होने से पूर्व ही मुरझा गई, हमें इसका किञ्चित् भी विषाद नहीं नहीं, प्रत्युत् आह्लाद है क्योंकि उस कली की सौरभ युगों-युगों तक वातावरण को सुरभित करती रहेगी।

वह दीप, वह अपूर्व कली थी बहन चम्पा, जिसके चरण संसार की बीहड़ पगडंडी से विरक्त बन प्रतिक्षण प्रभु के पावन पथ पर बढ़ने को आतुर थे, जो संयम-सरिता में अपने पापों का प्रक्षालन करने के लिए प्रयत्नशील थी।

बहन चम्पा संस्था में प्रवेश पाते ही प्रवीणा बन गई। प्रारम्भ में हमने देखा कि वह एक चंचल मनोवृत्ति वाली बालिका थी, स्वतन्त्र वातावरण में पली कच्ची कली थी। पर धीरे-धीरे उसके जीवन ने जो अंगड़ाई ली, उसमें जो मोड़ आया—वह हम सब बहनों के लिए आश्चर्य

का विषय तो था ही साथ ही अनुकरणीय भी था। पहले वह जितनी चंचल थी, अन्तिम घड़ियों में उतनी ही निश्चल, शांत और गम्भीर बन गई।

उसके सौम्य चेहरे पर सदा मधुर मुस्कान बिखरी रहती थी। वाणी में मधुरता थी। वह प्रतिभाशालिनी बालिका थी। वह लेख और कविता लिखती थी। वह वक्तृत्व कला में भी कुशल थी। अध्ययन में उसकी विशेष रूचि थी, ध्यान में विशेष गति थी। वह एक सहनशील बालिका के रूप में हमारे सम्मुख रही। हमने अपनी आँखों से देखा कि जब कभी उसकी कोमल हथेलियाँ घावों से लहूलुहान हो जाती, तब भी वह अपना सारा कार्य स्वयं करने में ही प्रसन्नता का अनुभव करती। सचमुच उसकी सहनशीलता सराहनीय थी।

एक दिन रात्रि के समय वह ध्यान कर रही थी कि उसे एक अज्ञात आवाज सुनाई पड़ी :—"सावधान! इस जीवन के चार महीने अवशेष रहे हैं, करना है सो करलो।" इस वाक्य को हृदयंगम कर उसने उसे जीवन-सूत्र बना लिया। वह सजग बन समता की आराधना करने लगी। मृत्यु का नाम सुनकर ही जहाँ बड़े-बड़े साधक भी अधीर हो काँप उठते हैं, वहां १८ वर्ष की नन्हीं सी बालिका ने बड़े ही साहस व उत्साह से मृत्यु का निमंत्रण स्वीकार किया। उसके चेहरे पर तो क्या, मनमें भी तनिक भय की रेखा नहीं थी। वह अप्रमत्त और अभय बन गई थी। वह जानती थी :—

> मृत्योर्बिभेषि किं बाल! न स भीतं विमुञ्चति।
> अद्य वाब्द-शतान्ते वा मृत्युर्वै प्राणिनां ध्रुवः॥

ध्यान के द्वारा उसे अभय का वरदान मिला। वह निर्भीकता को

प्रतिमूर्ति बन गई। मृत्यु का आभास पाते ही वह जीवन के अथाह सागर में छिपे रत्नों को ढूंढने में जी-जान से जुट गई। वह मौन साधना करने लगी। इससे उसकी सोई शक्ति जग गई। अरइं आउट्टे से मेहावी—इस आगम वाक्य को आधार बना वह भवसागर तरने लगी, उसका सारा जीवन वैराग्य से ओत-प्रोत हो गया।

श्रावण शुक्ला द्वादशी के दिन प्रातः उसने प्रायः सभी बहनों से क्षमायाचना की और कहा कि मैं आज जा रही हूं। पर उसकी परम प्रसन्न मुखमुद्रा को देखकर किसे विश्वास होता? सबने यों ही हंसी में टाल दिया। उस दिन तो उसने बड़ी सूझबूझ से काम लिया। यहाँ तक कि मृत्यु के बाद जो कपड़े पहनाए जाते हैं, उन्हें भी तैयार कर पेटी में रख दिए। अपनी सारी पुस्तकें, कापियां जिन्हें देनी थी, दे दी। इस प्रकार से अपनी पूर्ण तैयारी कर उसने महाप्रयाण किया। नन्हीं साधिका का साहस भरा यह कार्य सबके लिए महान् आश्चर्य का विषय बन गया।

अन्तिम घड़ियों में भयंकर वेदना होने पर भी वह ऐसे लेटी थी, मानों ध्यान में लीन हो। वेदना से संघर्ष करते हुए भी उसके मुख से उफ तक नहीं निकली। उसकी सहनशीलता अद्‌भुत थी। मैंने पूछा—तुम्हारी अन्तिम इच्छा क्या है? अपनी शक्ति को बटोरते हुए दृढ़ता के स्वर में प्रवीणा बोली "मेरी एक ही कामना है, एक ही तमन्ना है—दीक्षा, दीक्षा, केवल दीक्षा।" फिर बहनों ने कहा—"आपकी माताजी को बुला दें।" तब उसने यही कहा "नहीं।" निर्ममत्व व अनासक्त भावना का उसमें कितना विकास हो गया था।

बहन प्रवीणा के शव को देखकर स्वयं आचार्य श्री ने फरमाया—"कौन कहता है कि उसकी मृत्यु हो गई। मुझे तो ऐसा लगा कि वह

ध्यानास्थ है, मरने के बाद ऐसी आकृति मैंने कभी नहीं देखी।" वह एक दिव्य आत्मा थी। प्रवीणा की मृत्यु एक चामत्कारिक व प्रेरणाप्रद घटना बन गई, जिसने नास्तिकों के हृदयों को भी एकबार हिला दिया। श्री पारमार्थिक शिक्षण संस्था के २२ वर्षों के इतिहास में यह प्रथम घटना थी। वह मर कर भी अमर बन गई और बन गई जन-जन की प्रेरणास्रोत।

ऐसी निर्मल, सरल, दिव्य आत्मा को मेरा शत्‌शत् प्रणाम।

—•—

एक पत्ता जो मधुमास बन गया

●

—सुश्री शान्ता जैन

संध्या की सुहावनी वेला में, छत पर बैठी, कल्पनाओं के धागों में उलझी अतीत के पृष्ठों को पढ़ रही थी। वर्तमान की सुदृढ़ भीति पर भविष्य के सुनहले संकल्पों को संजो रही थी। आकांक्षाओं और अभि-लाषाओं के दर्पण में जीवन के सुनहले पवित्र अध्याय के प्रतिविम्ब को देखने का प्रयत्न कर रही थी कि सहसा एक दिव्य आकृति दिखाई दी, जिसे मैंने अपलक दृष्टि से देखा और सोचा—कहीं स्वप्न तो नही देख रही हूँ। पर स्वप्न कैसे ? अभी मैं सोई कहां हूं। मैंने वड़े गौर से देखा। वह दिव्य आकृति मेरी प्रेरणा स्रोत, जीवन को नया मोड़ देने वाली "प्रवीणा" थी, जो आज इस नश्वर संसार से नाता तोड़ हम सबको छोड़ कहीं चली गई है, जिसके असम्भाव्य समाधि-मरण के समाचारों ने मेरे हृदय के तारों को झंकृत कर डाला था। हजारों मीलों की दूरी पर बैठी मैं इस सत्य को स्वीकार नहीं कर सकती थी। पर कर्मों की विचित्र लीला है। इसके सम्मुख तो सबको झुकना ही पड़ता है।

सचमुच कैसी विचित्र बात है कि जो मुझे एक बार नहीं, अनेक बार कहा करती थी कि बहन ! तुम्हारे और मेरे अतीत जीवन की बहुत सी अनुभूतियां एक-दूसरे से सामंजस्य रखती हैं तो क्यों न हम सदैव घनिष्ठ साथी बन उन्नत जीवन जीयें। यद्यपि यह मेरे लिए सरल बात न थी,

पर उसके मुख से सहज प्रस्फुटित यह वाक्य अब मेरे लिए स्नेहसिक्त भावों का प्रतीक बन गया। जहां मैं अपने वर्तमान जीवन को अब तक आलोकमय नहीं बना सकी वहाँ उसने अपने वर्तमान और भविष्य दोनों को उज्ज्वल बना लिया। आज वह सब का आनन्दानुभव करती हुई चैन की बांसुरी बजा रही है और मेरे सम्मुख खड़ी वह दिव्य छवि नश्वर संसार की क्षणभंगुरता का दिग्दर्शन कराती हुई मुझे सजग बनने की प्रेरणा दे रही है।

उसके अतीत जीवन की झलकियां आज भी मेरी आँखों के सम्मुख उभरती रहती हैं। वह एक कलाकार के रूप में थी जिसकी सौम्य मुख-मुद्रा, स्नेहसिक्त वाणी हर रोते हुए बालक को हंसा देती थी। उसके जीवन में कृत्रिमता का तार टूट कर सहजता का सूत्र बन गया था। उसके दैनिक कार्य-कलापों में सतत् जागरूकता, बाह्य आकर्षणों के प्रति मध्यस्थ भावना, सात्त्विक व्यवहार साधना जीवन की अमूल्य संपत्ति बन गई थी। चार मास पहले मृत्यु का भविष्य-ज्ञान पाकर चैतन्य शक्ति को जागृत करने तथा आत्मविमुखता से हटकर आत्मा का साक्षात्कार करने की तीव्र भावना, अपने संजोये स्वप्नों को साकार करने में प्राणप्रण से जुट जाना उसके उच्च आत्मबल का सूचक है।

वह निर्ममत्वमयी साधिका बन चुकी थी। जीवन के प्रथम क्षणों में ममतामयी मां की असीम लाड़-प्यार से भरी गोद में पली-पोसी थी। उस समय उस नाजुक कली को मां का मोह बहुत सताया करता था। एक बार किसी विदेशी द्वारा मां की मृत्यु का असत्य समाचार पा वह बहुत व्याकुल और व्यथित बन गई थी। परन्तु साधना के स्टेज तक पहुंच जाने के बाद फिर एक बार उसी असत्य घटना की पुनरावृत्ति उसे व्यथित नहीं बना सकी। उस समय हमने उसे सहज समता सरोवर में अवगाहन करते देखा था। उसके मुख से केवल यही सुना "आने वाला

एक दिन तो अवश्य ही जाएगा।" इस घटना से हम पा सकते हैं कि एक सीमा तक उसने मोह की उलझी गुत्थियों को सरल बना लिया था।

सहिष्णुता का श्रोत उसके रोम-रोम में प्रवाहित था। उसे लम्बे अर्से तक बीमारियों से जूझना पड़ा। उसके वे क्षण कसौटी के थे। उन कसौटी के क्षणों में वह स्वर्ण की भांति चमकी। उसमें महान् बनने की एक अजीब महत्वाकांक्षा थी। वह प्राय: सोचती कि विश्व-प्रांगण में वही महान् बन सका है जिसने अपने साहस के बल पर सघन अन्धकार को चीर कर, बर्फीले तूफानों और व्यवधानों को लांघते हुए, जीवन की बीहड़ पगडंडियों पर चलकर अमर आलोक को पाया है। यही शुभ्रभाव इसके रोम-रोम में व्याप्त थे। यही कारग है कि वह अपने अन्तिम क्षणों में विपम घाटियों और चट्टानों को अपने अदम्य आत्मबल से चीरती हुई इष्ट-मंजिल (समाधि-मरण) तक पहुंच गई। मैं उन दिनों फारबिसगंज गई हुई थी। जब मैंने यह पढ़ा कि प्रवीणा ने हंसते-हंसते मृत्यु का वरण किया है तो मुझे अति आह्लाद हुआ। पर साथ ही खिन्नता भी थी। क्योंकि मैं उस दिव्य आत्मा के अन्तिम दर्शन नहीं कर पाई। मृत्यु महोत्सव की पुनीत वेला में, रंगमंच के उस सुनहले पर्दे पर उस महान् चामत्कारिक व्यक्तित्व की अमर झांकियों का दृश्य मैं नहीं देख सकी। अब तो केवल स्मृति ही रह गई है।

सचमुच! उसने अपनी आश्चर्यकारी मृत्यु से संस्था के अमर इतिहास में स्वर्णाक्षरों से लिख दिया कि इस वसुन्धरा पर कोई पदार्थ अमर नहीं है। सब क्षणभंगुर है। नाशवान है। किन्तु वह तो मरकर भी अमर बन गई। आज वह हमारे बीच नहीं है किन्तु उसके पार्थिव शरीर की तस्वीर जब-जब देखती हूं तो ऐसा लगता है कि प्रवीणा जीवित है। वह बोल रही है और मुझे जीवन जीने की कला सिखा रही है।

कितने आश्चर्य की बात है कि कुछ ही रातों में सारा का सारा इतिहास बदल गया। जिस रंगमंच पर अभिनेत्री का अभिनय केवल कथानक के रूप में था वही समय पाकर इतिहास बन गया। अन्धकार को चीरकर एक विद्युत-शिखा चमकी और लुप्त हो गई। किन्तु उसका आलोक हम सबके लिए प्रकाश-स्तम्भ बन गया। संध्या-सरोवर में एक फूल खिला और मुरझा गया। पर उसकी मधुर महक सारे वातावरण को सुगन्धित कर गई। अस्तु यह कहना ही होगा कि :—

एक कथानक चलते-चलते यों इतिहास बना।
अंमे पत्ता अनुभव पाकर नव मधुमास बना॥

प्रवीणा : कुछ स्मृतियाँ

•

—श्री हनुमान सेठिया

महानगरी कलकत्ता का कर्ममय जीवन, प्रातःकालीन आवश्यक कार्य आदि से निवृत होकर मैं अपने ऑफिस के नित्य कार्यों में व्यस्त था। अभी आफिस आये थोड़ा ही समय हुआ था कि अचानक घड़ी की टन् टन् और भोंपू की आवाज के साथ ही फोन की घण्टी घनघना उठी। तीनों के सम्मिलित स्वर ने वातावरण को कोलाहलमय बना दिया। मानों कोई तूफान आ गया हो, रिसीवर हाथ में उठाया किसी परिचित आवाज से प्रवीणा की अमर मृत्यु का संवाद सुनकर, विचारों की उलझन में मस्तिष्क भटकने लगा। सोचने लगा—प्रवीणा कौन ? कौन प्रवीणा, मैं तो नही जानता, अरे चम्पा ! वो चम्पा ही जो आगे चलकर प्रवीणा बन गई, अब नहीं रही। इतनी जल्दी अवसान ! नहीं, नही जरूर चकमा दिया गया है। प्रवीणा के साधनामय जीवन का इतनी जल्दी अवसान कैसे हो सकता है ? कार्य करने की शृंखला पहले ही टूट चुकी थी। अतीत की स्मृतियाँ एकबारगी पुनः ताजी हो गई और याद आ गया वह शेर—

मौत उसकी है, करे जिसका जमाना अफसोस।
यूँ तो दुनिया में सभी आते हैं मरने के लिए॥

मैं एक ऐसे भाग्यशाली पड़ोस में पला एवम् बड़ा हुआ जिसने चमन में चार चाँद लगाने के लिए चार रत्न * दिये हैं। चम्पक की चंचलता, चपलता और चहकने का वर्णन कागज की चन्द पंक्तियों में नहीं हो सकता। इसके चमत्कारी चरित्र की व्याख्या चाह कर भी इसमें समा नहीं सकती। एक ही पड़ोस में रहने, साथ-साथ खेलने एवं साथ ही अध्ययन का मुझे जो अवसर मिला, उससे मुझे प्रवीणा को बहुत नजदीक से समझने का सौभाग्य मिला। याद आ जाता है उसका चमकता सरल चेहरा तो विश्वास ही नहीं होता कि बिजली की चकाचौंध और गड़गड़ाहट से भय पाने वाली बिजली की तरह ही चमकेगी।

परिस्थितियों ने मां के शरीर को काफी कमजोर बना दिया था। जब भी मां की शारीरिक अस्वस्थता की खबर लगती, दौड़ी चली आती, खाना बनाने को और नहीं नहीं करते हुए भी जबरन मुझे उठाकर खाना बनाने लग जाती। चिढ़ाने के लिए यदि कभी खाने में दोष निकाल कर कहता—ऐसा ही खाना बनाओगी क्या वहाँ जाकर, तब जाकर शिकायत कर देती मां को। मां कहती—लड़ो मत वहन भाई, इसको चिढ़ाते हो तो किसी दिन भूखे रहोगे।

किसी बात को बिना तर्क के स्वीकार करना तो वो जानती ही नहीं थी। एक एक विषय पर घण्टे बीत जाते बहस करते, आखिर सतियाँजी कहती "बाई! तन समझाणो दोरो" तब कहीं जाकर पीछा छूटता। विशेष सान्निध्य साध्वी कमलकँवरजी और रतनकँवरजी महासतियाँ जी का ही मिला दोनों को। कौन अन्दाज लगा सकता था कि बात बात में तर्क करने वाली यह बाला एक दिन समाधान पा ही जायेगी। सबके दिल पर

---

*(१) साध्वीश्री मंजुप्रभाजी (२) साध्वी श्री मंजुबालाजी (३) स्व० प्रवीणा एवं (४) अध्ययनरत बहिन अमिता (इलायची)

शासन करती थी—अपनी व्यवहार कुशलता और मृदुभाषा के जरिए। प्रायः गोष्ठियों में सीधी टक्कर रहती। हार मानना अपनी इज्जत के खिलाफ समझती थी। शिक्षण संस्था में पूर्व-अध्ययन के लिए जाने के बाद प्रवीणा ही कहता, यदा कदा मुख से चम्पा भी निकल जाता तो मुख पर अंगुली रखकर कहती "मुझे प्रवीणा कहते हैं। वाह री प्रवीणा! मानों चम्पा को जानती ही न हो। नियम की इतनी पक्की कि कोई भी लोभ काम नहीं आता। समय का सदुपयोग इतना कि जब इच्छा होती त्याग कर लेती।

बाल्यावस्था से ही चरित्रात्माओं के सान्निध्य में रहने से उसे साधना मय जीवन जीने की प्रेरणा मिली। ज्येष्ठा भगिनी साध्वीश्री मंजुबालाजी की दीक्षा ने उसके मार्ग को और प्रशस्त कर दिया। अपनी सहज सरलता, दृढ़ निष्ठा एवं कुशाग्र बुद्धि से उसने पारिवारिक जनों से दीक्षा की स्वीकृति प्राप्त कर ली। उसके अटल निर्णय के सामने पारिवारिक जनों की 'ना' रोड़ा बनकर नहीं रह सकी। उसे अपना जीवन बनाना था, बनाना ही नहीं चमकाना भी था। साधना जीवन के प्रारम्भिक दिनों में अध्ययनार्थ पारमार्थिक शिक्षण संस्था में प्रवेश लिया। एकाग्र अध्ययन के साथ ही साथ साधना के अन्यान्य क्षेत्रों में भी उसने चरण-न्यास किया। अपने छोटे से जीवन को कलापूर्ण बनाती हुई एक दिन प्रवीणा ने उस महान मार्ग का आलिंगन सहज भाव से स्वीकार किया, जिसकी बस आज मात्र स्मृति ही रह गई है। उसका महाप्रयाण हमें एक प्रेरणा दे गया है। उसकी दैविक शक्ति का दुनियां ने अंकन अवश्य किया, लेकिन देर से।

अदृष्ट संकेत, डायरी और हींच

—श्री नाथूलाल जैन 'जिज्ञासु'

संसार में अनेक प्राणी नित्य जन्म लेते हैं और अपनी इहलीला समाप्त कर चले जाते हैं, किन्तु मात्र जीवित रहने का नाम ही जीवन नहीं है। वास्तविक जीवन निर्विकारता—वीतरागता है। जीवन की इस वास्तविकता को विकसित करने के लिए प्रायः सभी दर्शनों ने विशेष साधना-पद्धतियों का निरूपण किया है। जैन-दर्शन जीवन के साथ-साथ शरीर त्याग की कला का भी विलक्षण पद्धति से प्रशिक्षण देता है। जीवन के अन्तिम क्षणों में सोल्लास मृत्यु महोत्सव मनाना एक विशेष बात है।

दिनांक ३ अगस्त १९७१ को पारमार्थिक शिक्षण संस्था की छात्रा प्रवीणा कुमारी ने भी अपना मृत्यु महोत्सव अत्यन्त चमत्कारी एवं आदर्श रूप में मनाया जिसकी कथा दर्शन के अनेक तत्वों—आत्मा, धर्म, धर्मफल और आस्तिकता आदि में निष्ठा उत्पन्न कर देती है।

पारमार्थिक शिक्षण संस्था वैरागी (संयमोन्मुख) भाई-बहिनों को जैन-दीक्षा (आचार्य श्री तुलसी के शिष्यत्व हेतु) से पूर्व स्वाध्याय, ध्यान योगासन आदि के द्वारा संयम का प्रशिक्षण तथा संस्कृत, हिन्दी, दर्शन एवं अन्य मानविकी विषयों का चार वर्ष तक शिक्षण प्रदान करती है। आत्मानुशासन एवं विनम्र व्यवहार संस्था की प्रमुख विशेषताएँ हैं। इन

समय संस्था में ३१ वहिनें अध्ययनरत हैं। मैं उनको जैन दर्शन एवं हिन्दी भाषा पढ़ाता हूँ।

तीन वर्ष पूर्व मोमासर के एक सम्पन्न परिवार की पन्द्रह वर्षीया कन्या—चम्पा ने संस्था में प्रवेश लिया था। प्रवेश से पूर्व उसे अपनी भावनाओं को साकार करने के लिए मां एवं भाइयों से संघर्ष भी करना पड़ा। जन्म से दो माह पूर्व ही पिता श्री कोडामलजी सेठिया के स्वर्गवास एवं बड़ी वहिन (साध्वी श्री मंजुबालाजी) के दीक्षित हो जाने के पश्चात् मां एवं भाइयों के लिए चम्पा के प्रति अत्यन्त स्नेह उत्पन्न हो जाना स्वाभाविक था। किन्तु, जब लाडली चम्पा ने भी वैराग्य की धुन छेड़ी तो परिवार को उसका विचार पसन्द नहीं आया। विरोध होने लगा तथा साथ साथ उसे सांसारिक आकर्षणों की ओर झुकाने के प्रयत्न भी किये जाने लगे। सिनेमा के द्वारा ऐश्वर्यपूर्ण जीवन की प्रेरणा भी दी गई, किन्तु चम्पा के संयम की 'लौ' मद्धिम नहीं हुई। आखिर उसे संस्था में प्रवेश की स्वीकृति मिल गयी। वह अत्यन्त प्रसन्न थी। संस्था में उसका नाम वदलकर 'प्रवीणा' रखा गया।

गौरवर्ण, इकहरा शरीर, सुन्दर और मृदु हास्य युक्त प्रफुल्लित नयन, ऐनक के भीतर चमकती आँखें एवं मधुर वाणी प्रवीणा के तेजस्वी और होनहार व्यक्तित्व के परिचायक थे। मेधावी एवं जिज्ञासु वृत्ति के साथ अनोखी सूझ बूझ की वह धनी थी। उसने संस्था की प्रथम एवं द्वितीय वर्ष की परीक्षाएँ प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की तथा रुग्णावस्था में भी साधना के साथ साथ सेकेण्ड्री परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। उसकी निर्ममत्व भावना प्रशंसनीय थी। योगसाधना में उसकी रुचि निरन्तर वढ़ रही थी। रात्रि को संस्था की वहिनें प्रायः चार बजे निद्रा त्यागती हैं किंतु, प्रवीणा २–३ बजे ही उठ कर ध्यान करने बैठ जाया करती थी।

अदृष्ट-संकेत :—

दिनांक १६ अप्रेल १९७१, सुजानगढ़, सेठिया गेस्ट हाउस, रात्रि के २ बजे, प्रवीणा ध्यान के लिए उठने की चेष्टा में थी कि सुमधुर ध्वनि से प्रश्न उठता है, "सो रही हो या जाग रही हो ?" "जाग रही हूं, ध्यान करने का समय हो गया" प्रवीणा ने तत्काल प्रत्युत्तर दिया। ध्वनि पुनः मुखरित होती है—"जो करना है करलो, चार महिने और हैं, फिर कुछ नहीं होगा।"

पूर्णतया सजग होकर प्रवीणा ने चारों ओर देखा, वहाँ कोई नहीं था। चार पाँच मिनटों तक कमरे में भीनी सुगन्ध अवश्य तैरती रही। प्रवीणा के लिए घटना आश्चर्यजनक थी। उसने अपनी सहपाठिन सुषमा कुमारी को वृत्त सुनाया। सुषमा ने कहा—"कोई जंजाल होगा अथवा किसी इष्टदेव ने तुम्हें सतर्क किया होगा।" प्रवीणा चिन्तित सी हुई।

१८ अप्रेल को उसी समय पुनः सहसा संकेत उभरता है, "चार महीने बाद एक 'हौंच' आएगी, इसमें बचना कठिन है। घबराने की कोई बात नहीं है, एक दिन तो जाना ही है।"—पुनः भीनी भीनी सुवास आती रही। प्रवीणा ने सुषमा से पुनः परामर्श किया। सुषमा ने कहा—"आपका अन्तिम समय निकट दीखता है, अतः आपको आत्मशुद्धि के कार्य अधिकाधिक करने चाहिए।" और, इसी प्रकार अगले दिन (१९-४-७१) भी ध्वनि उभरी पर आज प्रवीणा को साक्षात् अपने स्वर्गीय पिता के दर्शन हुए जिन्हें उसने कभी नहीं देखा था। पिता बोले—"पुत्री ! घबराना मत, कार्य में शीघ्रता करना, 'हौंच' में कम समय बाकी है।" और वे अदृश्य हो गये।

प्रवीणा का मन आन्दोलित हो उठा। संयम-ग्रहण के जिस सदय

पर वह बढ़ना चाहती थी, वह अभी उसे आचार्य श्री ने प्रदान नहीं किया था और अल्प जीवन का संकेत मिल चुका था। उसने साध पूरी करने के प्रयत्न प्रारम्भ कर दिये। वह साध्वी श्री मंजुबालाजी के पास अगले दिन पहुँची तथा उपरोक्त वृतान्त सुना दिया। संस्था के संयोजक श्री कल्याणमलजी बरड़िया को घटना सुनाकर प्रार्थना की कि वे आचार्य श्री से शीघ्र दीक्षा का आदेश दिलाकर कृतार्थ करें। एक पत्र भी प्रवीणा ने आचार्य श्री को निवेदन करने के लिए अदृष्ट संकेतों के विवरण सहित बरड़ियाजी को दिया, किन्तु स्वप्नों की बातें जानकर प्रवीणा की प्रार्थना पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया। संयोजक जी ने उससे कहा—"यदि अदृष्ट शक्ति मुझे कोई संकेत दे तो मैं तुम्हारी सहायता कर सकता हूँ।" इसके उपरान्त भी उन्होंने प्रवीणा का प्रार्थना-पत्र आचार्य श्री को कई बार निवेदन किया, किन्तु सफलता नहीं मिली। माना, प्रवीणा निराश हो गयी कि उसके पास अपनी योजना के पीछे ठोस प्रमाण नहीं था। पर वह उत्साहहीन नहीं हुई, स्वाध्याय में अपना अधिकांश समय लगाने लगी।

२७ अप्रेल, छापर, रात्रि का वही समय, पुनः संकेत-ध्वनि आती है—"मैं तुम्हारी सहायता तो अवश्य करूंगा किन्तु तुम्हारे अतिरिक्त किसी अन्य से कुछ न कहूँगा।"

प्रवीणा ने तुरन्त कहा—"आप जो भी हैं, मुझसे कहते हैं तो उन्हे (संयोजकजी) भी कह दीजिए, सुगन्ध का आभास ही दे दीजिए।" किन्तु पुनः पुनः सुगन्ध आने के अतिरिक्त कुछ नहीं हुआ। इसी प्रकार अनेक बार सुवास-संकेत मिले, तथा स्वप्नों में उसने अपनी मां और पिता के दर्शन भी किए। सहसा १७ मई को प्रातः दस बजे वह कमरे में अकेली स्वाध्याय रत थी कि सुवास के साथ ध्वनि मुखरित हुई, "दो दिन तक सुगन्ध फैलेगी जिसको कहना हो कह देना।" और रात्रि को

छात्राओं के शयन कक्ष में सुगन्ध बिखरी। प्रवीणा के साथ साथ सुषमा, प्रभा और सुमन (छात्राएं) ने भी उसका स्पष्ट अनुभव किया।

अदृष्ट संकेतों का यह क्रम चलता रहा। प्रवीणा ने आत्म-साधना, ध्यान, योग, स्वाध्याय में वृद्धि कर दी। उसका आत्म-विश्वास दृढ़तर होता गया।

आचार्य श्री तुलसी, लाडनूं (राजस्थान) में अपना वर्तमान चातुर्मासिक प्रवास कर रहे हैं। पारमार्थिक शिक्षण संस्था भी लाडनूं में ही अवस्थित है। दिनांक २ अगस्त १९७१ मध्यरात्रि में कुमारी प्रवीणा को संकेत मिलते हैं, "कल दिन के १२ बजे एक 'हींच' आएगी, बचने की आशा कम है। सावधान रहना। आजीवन अनशन का संकल्प न कर एक एक घण्टे का त्याग करना।" ['हींच' के सम्बन्ध में सर्वप्रथम संकेत १६ अप्रेल को मिले थे। चार माह में अभी समय बाकी था।]

मृत्यु महोत्सव :—

'मृत्यु' शब्द मात्र बड़ा भयावह होता है। मौत के नाम से अच्छे अच्छे वीरों के घुट-घुटी छूटने लगती है, किन्तु साधक को मृत्यु की सूचना विचलित नहीं कर पाती। उसे महाप्रयाण की तैयारी का अवसर प्रदान करती है। साधिका प्रवीणा प्रातःकाल (३ अगस्त) सामान्यतः उठी। गुरु-दर्शन, स्वाध्याय, प्रार्थना आदि नित्य-कर्मों में उसने बहिनों का साथ दिया। आज के दिन उसने उपवास रखना चाहा किन्तु किसी कारण वश उपवास नहीं कर सकी। रात्रि के संकेत उसने अपनी सहेली सुषमा व प्रभा से कहे कि, "आज मेरा "हींच" का दिन है, १२ बजे "हींच" आएगी।" और दोनों को अनेक शिक्षाएं दीं। प्रवीणा ने अपने वस्त्र-पुस्तकें आदि व्यवस्थित कर संदूक में रखे। दूसरी बहिनों की वस्तुएं लौटायी, सबसे विदाई लेते हुए क्षमा याचना की तथा

मृत्यु के पश्चात पहनाये जाने के श्वेत-वस्त्र एक ओर निकाल कर रख दिए। अपनी सहेलियों को विशेष संकेत दिया कि मृत्यु के उपरान्त घर वाले शोक न मनावें तथा उसे रंगीन वस्त्र नहीं पहनाये जाएं।

प्रवीणा की विनम्रता पूर्वक क्षमायाचना ने अन्य बहिनों के कौतुहल में वृद्धि की। उन्होंने पूछा, "आज कहाँ की तैयारी है, प्रवीणाजी !" और उन्हें मात्र स्मित हास्य से उत्तर मिला। एक बहिन विमला ने जिज्ञासापूर्वक पूछा, 'किन्तु चार माह तो अभी चौथ को होंगे, आज ही कैसे ?"

प्रवीणा का उत्तर था, "आज ही जा रही हूं।"

आज भी प्रवीणा नियमित रूप से कक्षा में उपस्थित हुई तथा पौने दस बजे तक उसने अध्ययन किया। थोड़ी देर बाद उसने दूध लिया तथा उपर के कक्ष में जाकर स्वाध्याय (सामायक) के लिए बैठ गयी। एक घण्टे तक आत्म शुद्धि की गीतिकाओं को उच्च-स्वर से गाया। सामायक से उठते ही मांगकर पानी पिया, पर वमन हो गया। उसने वहीं लेटने की इच्छा व्यक्त की। डाक्टर को बुलाया गया। इन्जेक्शन व दवा दी गयी, किन्तु असर नहीं हुआ। उससे बहिनों ने पूछा— "आपकी इच्छा क्या है ?"

प्रवीणा के मुंह से निकला, "दीक्षा !" उसने उस समय आचार्य श्री के दर्शनों की इच्छा भी व्यक्त की, किन्तु आचार्य श्री के समक्ष सही जानकारी नहीं पहुँच पायी, अतः दर्शन नहीं हुए। साध्वी मंजुबालाजी आदि साध्वियां वहां पहुँच गयी थीं। प्रवीणा ने ध्यानपूर्वक मंगल पाठ सुना तथा चौंककर कहा, "देखो ! सामने कितना प्रकाश है ?" किन्तु अन्य किसी को प्रकाश दिखाई नहीं दिया।

क्रमशः प्रवीणा के शरीर की शिथिलता बढ़ती गयी। मरणान्तिक कष्टों का अनुभव उसे हो रहा था, ऐसा उसके चेहरे के भावों से स्पष्ट था, फिर भी वह भेद विज्ञान तथा विवेक ख्यातिपूर्वक निर्ममत्व भाव में आत्म-लीन लगती थी।

अन्तिम समय में देखा गया प्रवीणा "शवासन" की अवस्था में निश्चल साधना में लीन है। आह, प्रलाप अथवा अवचेतना का आभास तक उसमें नहीं है। समाधि मरण की यह अवस्था वस्तुतः दर्शनीय थी। लगभग दो बजकर पैंतीस मिनट पर एक 'हींच' के साथ प्रवीणा ने सहर्ष महाप्रयाण किया।

मुझे याद आता है प्रवीणा ने एक दिन कक्षा में पूछा था, 'हींच' क्या होती है ?" मेरे लिए शब्द नया था। राजस्थानी भाषा का यह शब्द अल्प श्रुत ही था अतः प्रश्न उस दिन अनुत्तरित ही रह गया। आज 'हींच' का अर्थ स्पष्ट हो गया था। प्रवीणा के चले जाने पर ज्ञात हुआ, वह नियमित डायरी लिखती थी। मितभाषिणी एवं अत्यन्त विनम्र होने के कारण उसने कभी आग्रह नहीं किया था कि उसकी बातों पर विश्वास किया जाय, किन्तु उसकी डायरी में अंकित साक्षी घटनाओं का अक्षरशः वर्णन आज के बुद्धिशील मानव के लिए अनेक प्रश्न चिन्ह उपस्थित कर देते हैं।

साधना-रत मुमुक्षु कुमारी प्रवीणा का यह मरण समाधि-मरण होने से प्रसन्नता का विषय था। उसके मृत्यु-महोत्सव पर शोक कैसा ? आदि आज समस्त स्मृतियां घनीभूत होकर एक ऐसी बाल साधिका की कथा मात्र रह गयी है जिसने सतत जागरूक रह कर शुभ अध्यवसायी जीवन विकास एवं अलपय (१८ वर्ष) में अभय की साधना कर मृत्यु को

पराभूत किया। ऐसी विनम्र एवं निश्छल आत्मा के प्रति श्रद्धा से मस्तक स्वतः झुक जाता है।

वस्तुतः हम लोग धन्य थे, जिन्हें उस मृत्यु महोत्सव के साक्षात् दर्शन हुए•••!

— —

डायरी के पृष्ठों से
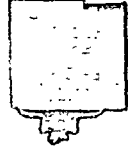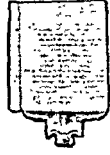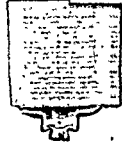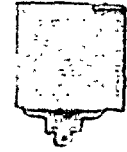
स्वर्गीया हमारी प्रवीना मंजिला की हस्त लिखित डायरी के कुछ पृष्ठ—जो इस प्रेरक घटना प्रसंग के साक्षात् प्रमाण है ।

कुमारी प्रवीणा के महाप्रयाण को एक और झांकी—

प्रवीणा के जीजाजी श्री खुमाणचन्दजी पटवारी एवं आत्मीयजन बैकुण्ठी उठाये हुये

चार महीने फिर कुछ नहीं

—सुजानगढ़
१६-४-७१
वि० सं० २०२८ वैसाख कृष्णा ८

मैं दिनांक १६-४-७१ की रात्रि में निशंक निद्रा के अंक में लेटी हुई थी। लगभग दो बजे आवाज आई कि—

"नींद में हो या जाग रही हो ?"

(उससे पहले मैं प्रति दिन रात्रि में २ बजे ध्यान करके उठा करती थी) जिस समय आवाज हुई, उस समय मैं अर्द्धजगी अवस्था में थी और उसी अवस्था में बोल पड़ी—

"उठ रही हूँ, अब ध्यान करने का समय हो गया है।"

तो वापस उसी समय आवाज आई कि—

"करना है सो कर लो, चार महीने और हैं फिर कुछ नहीं होगा।"

ये शब्द सुनते ही मैं तत्काल उठी तथा चारों ओर देखा, परन्तु कुछ भी दृष्टिगोचर नहीं हुआ। केवल मधुर-मधुर सुगन्ध आ रही थी। मैं उसी समय ध्यान करने लगी। पर ध्यान में सदा की भाँति स्थिरता

नहीं आई तथा बार-बार वे ही शब्द श्रोतेन्द्रिय से टकराते रहे व विचार आता रहा कि आखिर यह माया क्या है ? फिर चार बजे में ध्यान खोल कर घूमने चली गई, पर अन्दर ही अन्दर वह चिन्तन चलता रहा। दिन भर उदासीनता व हाथ पैर सुन्न से रहे।

शाम को जब मैं मास्टर साहब की घण्टी में गई तो चेहरे पर उदासीनता देख कर मास्टर साहब ने पूछा—प्रवीणाजी, आज तुम उदास कैसे ? मैं बात छुपाने की चेष्टा करती चेहरे पर हल्की-सी मुस्कान की झलक पेश कर बोली, 'नहीं तो'। इस प्रकार मैं बात को भुलाती व समाधान को बुलाती हुई, घंटी पढ़ कर भोजन किया व पहली मंजिल में प्रवेश किया ही था, कि संयोजक साहब ने कहा—'बहिनों, डूंगरगढ़-निवासी मुनिश्री रूपलालजी इस नश्वर देह को छोड़ परलोक पधार गए हैं।' हम बहिनों ने "लोगस्स" का ध्यान किया व यह भावना भाई कि "हम भी किसी दिन इसी तरह सथारा कर पंडित मरण को प्राप्त होंगी। इतने में ही मुझे रात्रि की घटना याद आ गई तथा न जाने क्यों मुँह से निकल गया "में कब मरूँगी ?" पास ही उपस्थित बहिन दमयन्ती कुमारी ने कहा—"जिस दिन आयुष्य पूर्ण होगा।"

इस प्रकार संकल्पों-विकल्पों के सागर में उत्ताल तरंगों के साथ हिलोरें लेती हुई मैं आचार्य श्री के ठिकाने के समस्थित मकान में जा पहुँची जहाँ पर मुनिराज का पार्थिव शरीर एक खम्भे के साथ बँधा हुआ था। उसे देखते ही सारा शरीर रोमांचित हो उठा तथा रात्रि के स्वप्नानुसार मेरी मृत्यु भी मेरे सामने आने लगी तथा रात्रि को क्षण भर के लिये भी नींद नहीं आई।

दूसरे दिन मैंने अपनी सारी स्थिति बहिन सूषमा को कह दी। तब उसने कहा कि इस सम्बन्ध में मैं आपको क्या कह सकती हूं ? हो सकता

है कोई ऐसे ही जंजाल आ गया हो या आपके शुभ कर्म के उदय से मृत्यु के चार महीने पहले ही किसी सम्यक्ती देव ने आपको सावधान कर दिया हो। फिर उन्होंने चार-पाँच जीवनोपयोगी बातें बतलाईं व अपने काम में जुट गईं।

उसी रात्रि को यानी दिनांक १८-४-७१ को उसी दिन की भाँति ही रात्रि के ठीक दो बजे अत्यन्त ही सुमधुर आवाज सुनाई दी। उस दिन मैं जागृत अवस्था में थी कि सुनाई दिया—

"लगभग चार महीने बाद एक ऐसी हींच आयेगी कि जिसमें तुम्हारा बचना दुष्कर है, और बच गई तो फिर कुछ भी डर नहीं, नहीं तो डरना क्या है? एक दिन जाना है।"

तथा उसी दिन की भांति ही भीनी-भीनी सुवास आई, पर दृष्टि-गोचर नहीं हुआ कुछ भी।

दूसरे दिन फिर मैंने सारी स्थिति बहिन कुमारी सुषमा को कही तो उसने कहा—स्वप्नानुसार तो लगता है अब आपका अन्तिम समय है सो भावों की शुद्धि बहुत आवश्यक है। शुद्ध भाव से सब कुछ हो सकता है। आपको अधिकाधिक धर्म-ध्यान करना चाहिए।"

इसी प्रकार मैं सदा की भाँति ही दिनांक १९-४-७१ को डाक्टर में लेटी हुई थी। रात्रि के ठीक तीन बजे मेरे स्वर्गीय पिताजी ने मुझे दर्शन दिए तथा कहा—पुत्री! घबराना मत।

नोट :— संभवतः डाक्टर २१-४-७१ को पहुँची थी। इसलिए संभव है तारीख लिखने में भूल रही हो। यह ता० १९-४-७१ के स्थान पर २१ या २२ अप्रैल होनी चाहिए।

"पुत्री ! घबराना मत कार्य में शीघ्रता करो। हींच में बहुत कम समय बाकी है।"

बस इतना कहकर आप तो अदृश्य हो गए। पर मेरा दिल एकदम उचट गया, न जानें क्यों, रह रह कर दिल में एक ही विचार आ रहा था कि क्या मैं जिस पथ पर चरण बढ़ाने को अग्रसर हो रही हूँ उस पथ को इस छोटी-सी सांझ में इतने बड़े आंधी व तूफान आकर रोकने में समर्थ हो सकेंगे जो एक हींच के रूप में होगी ? क्या मैंने चरण बढ़ाते समय कभी चिन्तन किया, इस वर्तमान की घटना का ? हाँ, अवश्य। अगर चिन्तन न किया होता इस विषय का तो "अमराय मांण" का आचरण करती हुई भौतिक सुखों में ही उलझी रहती, यानी दीक्षा की भावना ही न होती।

पर क्षण भर बाद फिर वही विचार आता है कि क्या मेरी मनोकामना मेरे मन में ही रहेगी ? अब मैं क्या करूँ ? इतने से दिनों में इतने सारे कर्म कैसे काटूँ ? क्या ही अच्छा हो अगर भावना पूर्ण हो जाए तथा दीक्षा प्राप्त हो जाए आदि-आदि प्रश्न हर समय मुझे घेरे रहते हैं। बस एक ही तम्मना है, अगर किसी भी तरह लक्ष्यपूर्ति हो जाए तो मृत्यु का कोई भय नहीं, मरना तो एक दिन है ही।

इस प्रकार संकल्प विकल्प करती हुई मैं सतियाँजी महाराज के गई तथा सारी बात लिखित रूप से बाईजी महाराज (साध्वी श्रीमंजुबालाजी) को बतलाई तो उन्होंने कहा कि तुम रात्रि में ध्यान करती हो इसलिए किसी ने परीक्षा ली होगी। फिर साध्वी श्री राजकुमारीजी व मुनि श्री दुलीचन्दजी के एक-दो उदाहरण बतलाए। फिर मैंने जब पिताजी की कही हुई बात बतलाई तो उन्होंने कहा—तब तो तुम्हें सारी स्थिति कल्याणमलजी को कह देनी चाहिए, ताकि वे आचार्य प्रवर तक पहुँचा दें। अगर स्थिति बने तो सबके ध्यान में रहे।

फिर मैंने सारी स्थिति संयोजक साहब को कह दी, पर आपको विश्वास नहीं हुआ, भला विश्वास हो भी तो कैसे, क्योंकि कोई प्रमाण नहीं मिला।

संकेत का प्रमाण

उसके ठीक एक सप्ताह बाद यानी दि० २७-४-७१ को फिर सदा की भाँति आवाज आई कि :—

"मैं तुम्हारी सहायता तो अवश्य करूँगा, पर मैं तुम्हारे सिवाय और किसी को नहीं कहूँगा, समय आने पर देखा जाएगा।"

मैंने सोचा, अब संयोजक साहब को विश्वास कैसे दिलाऊँ ? और कहा—आप जो भी हैं, मुझे कहते हैं तो उन्हें भी कह दीजिए, नहीं तो सुगन्धि ही दिखा दीजिए। पर कोई हो तो सुने, केवल सुगन्धी आती रही। इसके बाद ४-५ बार सुगन्धी आई। फिर एक दिन और आवाज आई कि —

"क्या कर रही हो ?

और सुगन्धी आई, पर दृष्टिगोचर कुछ भी नहीं हुआ। फिर दिनांक १७-५-७१ को मुझे भुआ का पत्र मिला कि तुम्हारी माता जी का देहावसान हो गया। उसी रात्रि को मुझे स्वप्न आया कि—

"मां से मिल लो।"

मैंने सोचा मेरे मन में यही विचार था, इसलिये स्वप्न आ गया होगा। फिर दिनांक १८-५-७१ को पुनः मेरे पिताजी ने दर्शन दिए। मेरी माताजी मुझे भूआ मिला रही हैं तथा पिताजी मेरे मस्तिष्क पर

हाथ फेर रहे हैं। यह सब स्वप्न में देखा, फिर पिताजी ने माताजी से कहा—

"तुम इसे यह चूरमा खिला दो, मैं तो जा रहा हूँ, तुम अभी सेवा करलो, यह अभी यहाँ हैं।"

उसी समय मेरी नींद टूट गई, तथा सुबह मैं और प्रभाकुमारी व सुषमाकुमारी तीनों "हेम-नवरसा" पढ़ रही थी तो मैंने कहा-मेरी माताजी वाला पत्र तो झूठा होगा, उन्होंने पूछा—तुम्हें क्या मालूम ? मैंने रात्रि के स्वप्न की बात बतलाई और दूसरे ही दिन मेरी माताजी का पत्र आ गया।

उस दिन मैं दोपहर को करीब १०-१५ मिनट बैठी ही थी कि फिर मुझे आवाज आयी कि—

"आज और कल दो दिन सुवास आएगी सो जिसको भी कहना है कह देना।"

मैं उसी समय उठी और पढ़ने लग गई। रात्रि में सचमुच ही मुझे सुगन्धि आई। फिर मैंने दूसरे दिन बहिन प्रभाकुमारी और सुषमाकुमारी को जगाया, व बहिन सुमनकुमारी भी उस समय जाग रही थी, तो मेरे साथ-साथ उन तीनों को भी सुवास आई। यह बात पड़िहारा की है। दूसरे दिन ही मैं सवा महिने के अवकास हेतु मोमासर आ गई। दि० २५-५-७१ को सदा की भाँति सुवास आई तथा दर्शन भी हुए।

"यहाँ पर तो तुम स्वतन्त्रतापूर्वक अधिक-से अधिक अपना कार्य कर सकती हो ना।"

बात कहने से पहले चेहरा स्पष्ट नहीं दीख रहा था, फिर पूर्णरूपेण स्पष्ट दिखाई देने लगा एक तो साध्वी श्री हुलासांजी (सरदारशहर) तथा दूसरे सन्त जिन्होंने ऊंची-ऊंची लूंगी (चोलपट्ट) पहन रखी थी, तथा उपर का बदन खुला था, चौड़ी अधिक व लम्बी कम मुख-वस्त्रिका, गोल चमकीली आँखें पर, दोनों ही के पास रजोहरण नहीं था। मैंने दर्शन किए तो कहा—

हम अब साधु नहीं रहे हैं, तुम वन्दना मत करो।

और अदृश्यमान् हो गए। उस रोज सुगन्धी बहुत तेज आई थी, पर केवल एक क्षण ही।

स्वामी जी का संकेत और मृत्यु महोत्सव

ता० २-८-७१ को उसे स्वामीजी के दर्शन हुए और उसे संकेत मिला "कल दिन के १२ बजे हींच आएगी। तुम संथारा मत करना, एक-एक घंटे का त्याग करती रहना। बचने की बहुत कम आशा है, अतः सावधान रहना।"

सुबह उठते ही उसने यह बात बहिन सुषमाकुमारी को कह दी। सुषमाकुमारी ने कहा—तब तो आपको बिल्कुल ही मोह नहीं करना चाहिए, ध्यान और स्वाध्याय में तल्लीन रहना चाहिए। उसके बाद प्रवीणा ने उपवास करने की इच्छा व्यक्त की, लेकिन संयोजक साहब से पूछने की हिमत नहीं हुई। क्योंकि संस्था का नियम है कि बिना संयोजक साहब के पूछे बगैर तपस्या नहीं की जा सकती। तब उसने एक प्रहर के त्याग कर दिये। प्रहर आने के बाद उसने थोड़ा दूध पिया और १२ बजे तक फिर त्याग कर दिया। सामायिक लेकर फिर ध्यान करने बैठ गई, फिर जोर-जोर से स्वाध्याय करने लगी। उसके बाद १२ बजे थोड़ा-सा पानी पिया, लेकिन पीते ही उल्टी हो गई, आंखें बन्द हो गई। सारे शरीर में दर्द महसूस होने लगा। उसी समय साध्वियाँ दर्शन देने आईं। उसने लेटे-लेटे ही दर्शन किये और सबसे क्षमा-याचना की। साध्वियों ने कहा—तुम्हें क्या दिखाई देता है? तब उसने कहा—सामने स्वामीजी खड़े हैं, देखो कितना प्रकाश है। उधर देखो, पानी की कुण्ड के पास खड़े हैं। पीली-पीली मुखपति बांध रखी है। (हाथ से इशारा
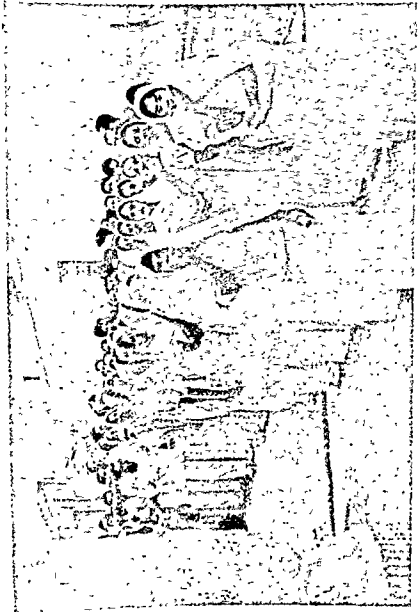
कुमारी प्रवीणा के महाप्रयाण के समय का अविस्मरणीय दृश्य—पारमार्थिक शिक्षण संस्था की बहिनें आध्यात्मिक गीतिकाएं गाती हुई।

बड़ी बहिन श्रीमती विजया देवी पटावरी एवं भानजी चेरी गुप्ता के
साथ प्रसन्न मुद्रा में प्रवीणा

करते हुए कहा) मुझे इस प्रकार झाला दे रहे हैं। तब सभी बहनें हंसने लगी और कहा—'कहाँ दिखते है, हमें तो नहीं दिखते, तब उसने पुनः वही ऊपर वाली बात दुहराई और संयोजक साहब से कहा—आचार्य प्रवर के दर्शन हो जाए तो एक बात कहनी है। तब संयोजक साहब ने कहा—"अभी आचार्य श्री के आहार करने का समय है इसलिये अभी दर्शन नहीं हो सकेंगे ? तब बहनों ने कहा—'हम अर्ज करने के लिये जा रहीं हैं'। तीन बहनें आचार्य प्रवर को दर्शन देने हेतु अर्ज करने गईं। लेकिन आचार्य प्रवर का पधारना नहीं हुआ। समीप बैठी कंचन देवी ने कहा—तुम स्वामीजी के दर्शन कर रही हो तो फिर आचार्य प्रवर के दर्शन क्यों ? तब प्रवीणा ने बड़ी शान्ति से उत्तर दिया—मैं दोनों के ही दर्शन करूंगी। सुशीलाकुमारी ने पूछा—आपके मन में क्या भावना है ? उसने आचार्य प्रवर के दर्शनों की भावना व्यक्त की।

ठीक दो बजे उसने बहिन अमिताकुमारी से कहा—मैं तो उपर जा रही हूं तुम भी जाओगी क्या ? तब बहिन अमिताकुमारी ने कहा—बुआंसा ! आप ही जाओ, और पूछा—आपको क्या आभास हो रहा है। तब बहिन प्रवीणा ने कहा—मैं तो उपर जा रही हूं। फिर बहिन कंचन से कहा—आचार्यजी को एक बात कहनी है। फिर कुछ समय बाद साध्वियां आईं, उसने लेटे-लेटे दर्शन किये तथा मंगल पाठ सुना। तत्पश्चात वह एकदम शान्ति से पीड़ा को सहन करती हुई लेटी रही तथा २ बजकर ३५ मिनट पर उसके सारे शरीर में कम्पन हुआ, भयंकर पीड़ा होने लगी। समीप बैठी बहिनों ने शरीर को पकड़ना चाहा, परन्तु उसने इन्कार कर दिया। तत्पश्चात मुंह और नाक से पानी आने लगा। एक क्षण उसके मुंह से आह निकली और प्राण पंखेरू उड़ गये।

आज से १५ दिन पहले उसने बहिन सुषमाकुमारी तथा बहिन प्रभाकुमारी से कहा—मेरा अन्तिम समय नजदीक आ रहा है, यदि ऐसा

हो जाए तो मेरी मां को कह देना कि शोक न करे, हरे वस्त्र न पहने, तथा मुझे रंगीन वस्त्र न पहनाए ।

आज ही उसने बहिन नुपमाकुमारी से पूछा—तुम्हें क्या चाहिए ? जब बहिन नुपमाकुमारी ने जवाब नहीं दिया तब उसको कहने लगी—आत्म कल्याण को मुख्य मानना, मोह मत करना, संस्था में कोई नियम बने तो विशेष ध्यान रखना । शरीर का ध्यान रखना, कमजोर है इसलिए साधना करनी है ।

सुबह से ही उसने अपनी तैयारी करनी प्रारम्भ कर दी । कहने लगी—आज १२ बजे के बाद यह शरीर रहने का नहीं है । सारी चीजें किताबें वगैरह जिन-जिन की थी सबको संभला दी । सबसे तीन-तीन चार-चार बार क्षमायाचना की । यहाँ तक कि अपने देहावसान के बाद में पहनने के नए कपड़े निकाल कर रख दिए । उसकी माताजी को बुलाने के लिए पूछा गया तब बहिन प्रवीणाकुमारी ने उत्तर दिया—माताजी को बुलाने की कोई आवश्यकता नहीं है । एक फाउन्टेनपेन साध्वी श्री मंजुबालाजी के पास था, उसके लिए उसने अमिताकुमारी से कहा—तुम पेन ले लेना एवं तुम्हारी सन्दूक छोटी है इसलिए मेरी वाली सन्दूक ले लेना ।

—:—

आचार्यश्री को विनय-पत्र

परम वन्दनीय, श्रद्धास्पद, युगप्रधान, विश्व-सम्राट, कोविद कुलालंकार, सरस्वती के वरदपुत्र, शशिसम शीतल, सूर्यसम तेजस्वी, अणुव्रत अनुशास्ता श्री-श्री १००८ श्री आचार्य प्रवर के चरणों में

सादर सभक्ति, सविनय शत्-शत् वन्दना।

पारस मणि !

आप लोहे को स्वर्ण बनाने वाले पारसमणि के समान हैं। मुझे आशा है कि आप इस पापात्मा का उद्धार भी अपनी शरण में रखवाकर अवश्य ही कराएंगे।

हृदय देवता !

मेरे हृदय की भावना को मैंने आपके चरणों में व्यक्त करके सही स्थिति से अवगत करवा दिया है। विश्वास है आप इस पर अवश्य ही गौर कराएंगे। मैं आपके चरणों में सर्वस्व समर्पण कर चुकी हूं।

मेरी सविनय श्रद्धाञ्जलि प्रार्थना है कि आप मेरे भविष्य को ध्यान में रखते हुए वर्तमान को दिखाएँ।

गुरुदेव के चरणों में शत्-शत् वन्दना।

आपकी सुशिष्या
कुमारी प्रवीणा जैन "मोमासर"

वर्ष गांठ पर संकल्प

❀

जो व्यक्ति अपनी आत्मा का उत्थान चाहता है। उसे अपनी इच्छाओं का दमन करना चाहिए। अपने मन को वश में रखना चाहिए। इन्द्रियों को जीते। अपनी आत्मा को देखे। उसके रहस्यों को पहचाने। अपनी गलतियों की तरफ ध्यान दो। भगवान महावीर के इस वाक्य को आत्मा में रमा ले कि 'समयं गोयम मापमाइये'। क्योंकि उपरोक्त सभी बातें जीवन में तभी उतर सकती हैं, जब मनुष्य समय की पाबन्दी रखता हुआ कार्य करेगा। यह सब चीजें एक साथ व एक दिन में होने वाली नहीं हैं, परन्तु धीरे-धीरे क्रम बढाने से अवश्य ही एक दिन ऐसा आयेगा, जिस दिन वह अपने शुद्ध स्वरूप को पहचान लेगा। किसी कवि ने ठीक ही कहा है—

धीरे-धीरे रे मना, धीरे सब कुछ होय।
माली सींचे सौ घड़ा, ऋतु आये फल होय॥

मनुष्य को कभी हताश नहीं होना चाहिये। मान लीजिये वह एक बार प्रयत्न करता है और उसे सफलता प्राप्त नहीं होती तो दूसरी तीसरी बार उसे कोशिश करनी चाहिये, बल्कि यह नहीं कि वह हताश होकर वहीं का वहीं रुक जाय। यह उक्ति ठीक है कि आवश्यकता ही आविष्कार की जननी है।

मेरे जीवन में कई मानवीय गुणों की कमजोरियाँ घर कर गई हैं।

उन्हें निकालने के लिये मुझे बड़े अनुशासन से काम लेना पड़ेगा। क्योंकि यह मन इतना ढीठ हो गया है कि बार-बार कहने पर भी नहीं रुक रहा है। मुझे मेरे मन से घृणा हो गई है अतः मैं अपनी इस वर्ष गांठ के अवसर पर यही संकल्प करती हूँ कि मैं अपने मन को वशमें करने की कोशिश करूंगी। जहाँ तक हो सकेगा इच्छाओं को दमन करने की चेटा करूंगी। कैसी भी स्थिति हो धैर्य से काम लेने की चेष्टा करूंगी। लेकिन ये सभी बातें तभी सिद्ध हो सकती हैं, जब कुछ ऐसे नियम हों। ऐसे वर्षगांठ तो प्रति वर्ष आती हैं, पर मेरे मन में कभी यह विचार तक नहीं आया कि वर्ष-गांठके अवसर पर क्या करना चाहिये ? इतने साल बीत गये, यह सोचा करती थी कि वर्ष-गांठ के दिन जितनी खुशी मनाई जाये, मिठाई खाई जाये, नए कपड़े पहने जायें, बस यही वर्ष-गांठका सार है। परन्तु इस बार मुझे मुनिश्री डूंगरमल जी व मुनिश्री शोभामल जी से इस प्रकार की शिक्षा मिली कि वर्ष-गांठ पर क्या करना चाहिए। इस प्रकार का भान हुआ। नई दिशा मिली इसलिये मैं कृतकृत्य हूँ। बस हार्दिक तमन्ना पूरी हो इसी आशा के साथ.............. ... ..

मैं अपनी पन्द्रहवीं वर्ष गठ पर देवगुरु, धर्मगुरु की साक्षी से निम्न व्रतों को स्वीकार करती हूँ। आशा है देव, धर्म, गुरु के प्रताप से मैं अपने नियमों को पूर्णरूपेण पालन करने में समर्थ बनूंगी। इसी आशा के साथ...........

नित्य किए जाने वाले नियमः—

(१) प्रतिदिनः—२ घण्टा ध्यान करना, १ घण्टा धूप में। नहीं तो दूसरे दिन नमक नहीं खाना।

(२) प्रतिदिनः—सामायिक करना, जिसमें पूर्ण सावधानी रखना।

(३) „ आधा घण्टा आलोचन में लगाना।

(४) प्रतिदिन—सतरह द्रव्यों से अधिक न खाना।

(५) ,, हज़ार गाथा की स्वाध्याय करना।

(६) ,, भोजन झूठा नहीं डालना।

(७) ,, एक लेख व कविता बनाना।

(८) ,, दो घन्टा मौन रहना।

(९) ,, अखबार पढ़ना।

(१०) ,, नियमित रूप से धार्मिक पुस्तक पढ़ना (दस पृष्ठ)

(११) ,, चौदह नियम चितारना, विस्तारपूर्वक व शाम को वापस व्रतावलोकन करके दोष लगा हो तो देखना।

(१२) ,, पूरे दिन में २ घन्टा के अतिरिक्त तिविहार त्याग करना।

(१३) महीने में ५ दिन आधा २ घन्टा अन्य धर्म की पुस्तक भी पढ़ना।

(१४) सभी धर्मों का पूर्णरूपेण पालन करना।

(१५) महीने में चार दिन ऐसा चिंतन करना कि मेरा ध्येय क्या है ? मुझे किस रास्ते पर अग्रसर होना है तथा किस तरफ जा रही हूं आदि विचार करना।

आत्मा सम्बन्धी नियमः—

(१) किसी भी प्राणी की विना अपराध घात नहीं करना।

(२) निर्ममत्व भावना उत्तरोत्तर बढ़ाना।

(३) क्रोध की प्रवृत्ति को जहाँ तक हो सके छोड़ने का प्रयत्न करना। महीने में तीन वार से अधिक क्रोध आने पर एक दिन विगय का त्याग करना।

(४) दूसरों के अवगुणों की तरफ ध्यान न देकर जिनमें जो गुण हों उन्हें जीवन में उतारने की कोशिश करना। अगर दूसरों की गलती की तरफ ध्यान चला जाय (महीने में सात वार से अधिक) तो एक दिन एक समय भोजन न करना।

(५) कोई अपनी गलती बताये तो सहर्ष स्वीकार करना व ज्यादा कुछ न कहकर ध्यान रखूँगी, कृपा की, बस इससे ज्यादा कुछ न बोलना। अगर इसके विपरीत हो जाये तो दूसरे दिन प्रहर करना।

(६) पाप भीरुता रखना। बड़ों के प्रति विनय छोटों के प्रति वत्सलता दिखाना।

(७) जो काम स्वयं को आता हो, उसे दूसरों को भी बताना।

(८) अंहकार नहीं करना।

(९) रोना नहीं। अगर महीने में दो बार से अधिक रो गई तो एक उपवास करना होगा।

(१०) किसी भी काम को करें, जैसे नहाना, कपड़े धोना आदि आदि तो फैसन की दृष्टि से नहीं करना। कपड़े साफ धोये तो इस भावना से कि में अच्छी लगूँगी बल्कि इस भावना से साफ धुला कपड़ा जल्दी मैला नहीं होता।

(११) स्नान करते समय एक बाल्टी से अधिक पानी नहीं लगाना।

(१२) ३० सब्जी ३० मिठाई से अधिक नहीं खाना।

(१३) ग्लान रोगी की सेवा करते समय घृणा के भाव न आने देना बल्कि ऐसा विचार लाना कि धन्य हैं मुझे मेरे भाग्य को जो कि मुझे सेवा का अवसर प्राप्त हुआ।

(१४) अपने उपकारी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना ।

(१५) किसी भी कार्य करने से पूर्व चिन्तन करना ।

(१६) अपने शत्रु के साथ भी मित्र का व्यवहार करना ।

(१७) सभी कार्यों का तरीका सीखना, जीवन में सरलता लाना ।

(१८) किसी विषय पर असत्य बोलने का ध्यान न रखना । मजाक में कहना दूसरी बात है ।

(१९) किसी वस्तु को चोर प्रवृत्ति से नहीं लेना ।

(२०) ब्रह्मचर्य व्रत का नववाड़ सहित पूर्ण रूपेण पालन करना ।

बस मैं आशा करती हूँ कि इन नियमों का पालन कर मैं अपने जीवन की उलझी गुत्थियों को सुलझा सकूंगी, ऐसा मेरा विश्वास है ।

बस इन्हीं सब दृढ़ धारणाओं के साथ पन्द्रहवें वर्ष में प्रवेश करती हुई पारमार्थिक शिक्षण संस्था की मुमुक्ष छात्रा—

कुमारी प्रवीणा सेठिया
मोमासर निवासिनी

दि० १४ सितम्बर १९६९ ।
यह शुभ दिन है भाद्र कृष्णा—४
बृहस्पतिवार ।

पत्रों में अन्तरभावना का प्रतिविम्ब

दिनांक ३-१-६८

पूज्यवर जीजोजीसा से

चम्पा का सविनय सादर प्रणाम ज्ञात हो। आपका स्वास्थ्य सुन्दर होगा ध्यान रखावें। सरोज, कांता, कुसुम, व सुधा सानन्द होंगी यहां पर प्रकाशवती भी सानन्द हैं। पत्र आपका आपके विचारों से भाव भरा मिला पढ़कर समाचार मालूम किये। आप बतलाइये कि आपके तथा मेरे विचार कैसे मिल सकते हैं। अगर मैं आप की तरह मोह में फँस जाऊँ तब तो आपके तथा मेरे विचार मिल सकते हैं, या मैं जिस संयममार्ग को अंगीकार करना चाहती हूँ, उसको आप पसन्द करके मुझे शुभ आर्शीवाद दिराने की कृपा करावें, तभी आपके तथा मेरे विचार मिल सकते हैं। आपने लिखा कि मोक्ष प्राप्ति दीक्षा लेने मात्र से ही होती तो करोड़ो, अरबों लोग दुनियां में क्यों रहते सभी तेरापंथी साधु वन जाते। लेकिन जीजोजीसा! ऐसा न अब तक हुआ है और न होगा। और मैं यह कहती भी नहीं हूं कि मोक्ष प्राप्ति दीक्षा लेने मात्र से ही होती है, यह आत्मिक शुद्धि है। जो आत्मिक शुद्धि करेगा उसे इस जन्म मृत्यु के अविरल प्रवाह में बहना नहीं होगा। जैसे भगवान ने मुक्ति के दो मार्ग बतलाए हैं (१) आगार धर्म (२) अनागार धर्म। जिसकी इच्छा हो वह आगार धर्म की उपासना कर सकता है, और जिसकी इच्छा हो तथा जिसने अपनी आत्मा को अध्यात्म रूपी तराजू से तोल लिया है अनागर धर्म की उपासना कर सकता है। मैं भी अपनी आत्मा को अध्यात्म रूपी तराजू से तोलकर

अनागार धर्म की उपासना करना चाहती हूँ और आपने लिखा कि एक महीना कटिहार (बिहार) आ जाइये आपको बहुत सी वस्तुएँ दिखलायेंगे। परन्तु मै आप से यह पूछना चाहती हूँ कि जो वस्तुएँ आप दिखलावोगे उनमें अनित्य वस्तुओं के अलावा कोई नित्य वस्तु भी दिखलाओगे क्या ? सब अनित्य ही अनित्य आप बतलाइये कि इस संसार में नित्य वस्तु क्या है ? मुझे तो अध्यात्मिकता के सिवाय एवं आत्मिक सुख के सिवाय और कोई भी वस्तु नित्य नहीं लगती है। आत्मिक सुख संयम मार्ग के सिवाय कहीं भी प्राप्त नहीं होनेवाला है। बल्कि अन्य सब सुख तो इस प्रकार हैं—

आयुर्वायु तरत रंग तरल लग्नापदः संपदः। सर्वेऽपिन्द्रिय गोचराश्च चटुला संध्या भ्ररा गादिवत। मित्र स्त्री स्वजनादि संङ्गम सुखन स्वप्नेन्द्र जालोपमं। तत् किं वस्तु भवे भवे दिह मालम्बंन यत्सताम" । अब आप बतलाइये कि जब संसार की सारी वस्तुएँ इस प्रकार हैं तो फिर वह कौन सी वस्तु रह गई जो सज्जन मनुष्यों के शाश्वतसुख की प्राप्ति का अवलम्बन हो सके मुझे तो इस असार संसार में आध्यात्मिकता के सिवाय और कोई वस्तु नित्य नहीं लगती है। आपने लिखा कि आप अपनी माँ के लिए सिर दर्द मत बनिये। परन्तु आप दो मिनट के लिये चिंतन कीजिए कि एक दिन तो हम लोग सबके सिरदर्द बनेंगे ही। न जाने आगे कितनों के सिरदर्द बनकर आये हैं और अगर भविष्य का चिंतन नहीं किया तो न जाने और कितनों के लिए बनेंगे। यह दुनियां तो मुसाफिरखाना है। यहाँ जो आये हैं उन्हें जाना ही होगा। तभी तो मैं कहती हूँ कि यह सम्बन्ध सारा अनित्य ही है। इसलिए मोह माया में फँसना नहीं चाहती हूँ। पत्र देना। त्रुटि के लिए क्षमा।

आपकी कनिष्ठा साली

चम्पा

पूजनीया बाई से मद्रास

प्रणाम ।

पत्र आपका मिला पढ़कर समाचार अवगत किये । मैं यहाँ पर गुरुदेव की असीम कृपा व आपके शुभाशीर्वाद से सानन्द रहती हुई आपको सानन्द चाहती हूं । आपका स्वास्थ्य सुन्दर होगा, ध्यान रखावें ।

बाई मैंने जब जन्म लेने की सोची तब तो पिताजी मुझे अपनी तरफ से अनाथ बनाकर दौड़ गये और जब मैंने नये जन्म में प्रवेश करने की सोची तो माताजी अपनी तरफ से अनाथ बनाकर छोड़ गये । क्या मेरे भाग्य में यही बदा था । यह कहावत सत्य है कि "दैवोऽपि दुर्बलघातकः" कमजोर मनुष्यों की विधाता भी सहायता नहीं करता, क्या होता था उसके (विधाता के) अगर मेरी दीक्षा मेरी माँ के हाथों से होने देता । लेकिन यह निष्ठुर यमराज किसी की नहीं सुनता है । खैर इसके आगे किसी का वश नहीं चलता है । हाय यमराज ! हाय यमराज ! धन्य है तुझे । अरे कहाँ है मेरा मन जो कि पगली बातें कर रही हूं । फिर भी छद्मस्थ हूं ।

अब कुछ नहीं होगा, गई हुई चीज वापिस नहीं आती है जो कुछ होना था वह हो गया, बाई मैं तो बच्ची हूं । बाकि आपको धैर्य से काम लेना होगा ध्यान रखें, धैर्य का बांध कहीं टूट न जाय । कष्ट मनुष्य पर ही आते हैं ।

हाँ, यह जानते हैं कि जब पिताजी की देह छूटी तब हमारे सामने एक आधार स्तम्भ था । परन्तु वह आज टूट गया है, फिर भी हम एक के

पीछे क्यों रोएँ। हम यह जानते हैं कि जो आया वह अवश्य जायेगा, इसी तरह हम भी एक दिन चले जायेंगे। शायद माता जी के गुरुदेव प मंजुबालांजी के दर्शनों की मन में रही होगी। यह शरीर क्षणभंगुर है। न जाने कितनों को धोखा दिया है और आगे भी देगा। मनुष्य यहाँ आकर ही हारा है नहीं तो "वह अमराय माण" की तरह की तरह आचरण करता है ज्यादा क्या लिखूं आप एक वार देश चले जाना क्योंकि भाभीजी के मुन्ना छोटा है शरीर खराव कर लेंगे! आप स्वयं समझदार है। कृपया धैर्य रखना। ऐसे समय में केवल धर्म ही आलम्वन भूत है। इलिए धर्म के बीज को सींचते रहें।

आपने स्वेटर बावत लिखा तो स्वेटर बुनकर भेज देना, मेरी कोटी न०२ तथा साड़ी न० ४ जरूर भेज देना हमलोग दिनांक २१ नवम्बर को पल्लोवरम जायेंगे फिर दक्षिण की लम्बी यात्रा के लिये प्रस्थान करेंगे। गुरुदेव ने माघ महोत्सव कुम्भकौणम् या चिदम्वरम् करना घोपित किया है तथा बाद में कन्याकुमारी व केरल पधारेंगे। पत्रोत्तर दिरावें। प्लास्टिक की थैलियां भेजना। मुझे वुलाया था किन्तु मेरा जाना अभी उचित नहीं समझती हूँ क्योंकि मेरा मन अभी ठीक नहीं है। केवल आना जाना होगा। आप लोग गुरुदेव के दर्शन करेंगे तव ही मिल लेंगे। पत्र दिरावें, त्रुटि के लिये क्षमा।

—प्रवीणा जैन

श्रद्धा सौरभ

मृत्यु को अमरत्व में बदला

—मुनिश्री मधुकरजी

प्रवीणा घटना तुम्हारी साधकों से कह रही
साधना पथ में सहस्रों विघ्न आते हैं सही।
भावना थी प्रबल मंजिल पर पहुँचने के लिए
यत्न अंतिम सांस तक कर सकी जितने सब किये ॥१॥

मृत्यु को अमरत्व में बदला स्वयं के बोध से।
अभय बन जूझी अकेली समागत अवरोध से
अटल आस्था लक्ष्य पर परवाह तन की भी न की
लग रहा यों फसल काटी गई शायद अधपकी ॥२॥

जो दिये संकेत उनका हार्द हम समझे नहीं
साधना सहयोग में कुछ इसलिए त्रुटियाँ रहीं।
मुक्त आशीर्वाद सबका साधिके है साथ में
बढ़ी आगे सिद्धि की कुंजी तुम्हारे हाथ में ॥३॥

चार चाँद लगा दिये अध्यात्म के आकाश में
पृष्ठ स्वर्णिम जुड़ गया है संघ के इतिहास में।
आत्मवादी उल्लसित बल मिल रहा विश्वास को
व्यक्त करते हैं सभी दिल में छिपे उल्लास को ॥४॥

———

अंकित जन-जन में गुण माला

•

—मुनिश्री नवरत्नमलजी

सौभाग्यवती वह कुल बाला, चमकी ज्यों मोती की माला।
भर लिया सुकृत रस का प्याला। सौभाग्यवती… ॥ ध्रुव ॥

चंपा से बनी 'प्रवीणा' है, सोने में जड़ा नगीना है।
खिलते उपवन की फुलमाला। सौभाग्यवती…॥ १ ॥

बचपन में धार्मिक रुचि उमड़ी, सड़कें संयम पथ की पकड़ी।
छोड़ी भौतिक सुख की शाला। सौभाग्यवती…॥ २ ॥

अन्तर वैराग्य बढ़ाया है भावों में रंग चढाया है।
पापों से रखती थी टाला। सौभाग्यवती… ॥ ३ ॥

सर सब्ज साधना कर २ के, शिक्षा की सौरभ भर-२ के,
अपने जीवन को उजवाला। सौभाग्यवती… ॥ ४ ॥

उद्बोधक आगे की झलकें, कर देती है गिली पलकें,
गद् गद् होते लाली लाला। सौभाग्यवती…॥ ५ ॥

हमको (परिजन) भी होता गर्व बड़ा, कर दिया सुयश का महल खड़ा,
पाकर के विजयी वरमाला। सौभाग्यवती…॥ ६ ॥

स्मृतियां उसकी बहु आयेंगी, यश क्षण-२ रसना गायेगी,
अंकित जन जन में गुणमाला। सौभाग्यवती…॥ ७ ॥

लय—ओ३म् शान्ति जिनेश्वर शान्ति करो—

नव इतिहास बनाया

*

—साध्वीश्री कानकुमारीजी

बहन प्रवीणा तुमने जीवन को चमकाया है कि
नव इतिहास बनाया है.........॥

चंचल वृत्ति तुम्हारी बोलो किससे थी अनजानी
क्रुद्ध भी हो पर करती थी तू खुद की ही मनमानी
सहसा कैसे बदली सबमें विस्मय छाया है ॥१॥

किसने सोचा था तुम ऐसा अभिनव पंथ वरोगी
नास्तिक दुनियां में आस्तिकता का विश्वास भरोगी
चार माह पहले ही घटना को बतलाया है ॥ २ ॥

ध्यान साधना के बल पर ही पाई तुमने स्थिरता
विनय और व्यवहार कुशलता पाई वचन मधुरता
संस्था में तुमने अद्भुत विश्वास पाया है ॥ ३ ॥

छोटी वय में काम अनूठा किया प्रवीणा तुमने
चली गई पर हैं ताजी स्मृतियां तेरी जन-२ में
अन्तिम घड़ियों में सुन्दर जो दृश्य दिखाया है ॥ ४ ॥

लय—ऋषिराज तुम्हारे चरणों में

दिव्य निशानी

*

—साध्वीश्री कनकश्रीजी

चम्पा वन चम्पक कली, खिली विश्व री डाल ।
झोलो वाज्यो काल रो, टूट पड़ी तत्काल ॥

विष में अमृत घोलती थारी मृदु मुस्कान ।
शिशु सी भोलप झलकती, मुख पर नित अम्लान ॥

हुया देव दर्शन सुखद, मिल्यो आत्म प्रबोध ।
गहराई में उतरगी, करने अपणी शोध ॥

नहीं मोत स्यूं तूं डरी, प्रत्युत दे सम्मान ।
कियो योजना-बद्ध तूं, मानो महाप्रयाण ॥

पा० शि० संस्था रो गढ्यो, तूं नूतन इतिहास ।
हुई विजय विश्वास री, अविश्वास पर खास ॥

प्रवीणां ! प्रेरक वस्तुतः, थारी शौर्य कहानी ।
लघु-वय में तूं संघ की, वणगी दिव्य निशानी ॥

थारै जीवन स्यूं लिख्यो, तूं थारो इतिहास ।
मैं समझूं फिर व्यर्थ ओ, लिखणै रो आयास ॥

—:०:—

मृत्यु कला

—साध्वीश्री कल्पलताजी

एक अधखिली कली
खिलने को तत्पर
बीच में ही मुरझा गई
और बता गई सबको समाधान
कि जीना और मरना भी एक कला है
जो हर क्षण रहता है सावधान।

उभरते हैं प्रश्न पर प्रश्न
क्या कर सकता है मानव
इस छोटे से जीवन में
पर समझ गये अब कि
जल्द ही फलता है बीज
और फल भी मिलता है
जो बोया गया हो सावन में।

समाधि का आदर्श

*

—साध्वीश्री मंजुबालाजी

जन्म प्रवीणा तुमने सफल बनाया
जीवन को भगिनी तुमने हृद चमकाया ॥
तुलसी का तुमने अभिनव सानिध्य पाया
भिक्षु ने आकर तुमको दर्श दिखाया
पाकर संकेत तुमने कदम बढ़ाया ॥ १ ॥
साधना से तेरा जीवन सहज विमल था
इसीलिए ही तेरा व्यवहार सरल था
सोचा जो तुमने सब कुच्छ करके दिखाया ॥ २ ॥
छोटी सी वय में तुमने सब कुछ देखा
पीछे भी छोड़ गई अपना जो लेखा
मानव जीवन का तुमने लाभ उठाया ॥ ३ ॥
नास्तिक जनों की तुमने ग्रन्थियां है खोली
आस्तिकता में और आस्था है घोली,
भैक्षव शासन पर सुन्दर कलस चढ़ाया ॥ ४ ॥
कर ली थी तुमने आगे जाने की व्यवस्था
सबसे क्षमा ले अपना पाटा है रास्ता
शान्ति-समाधि का आदर्श है दिखाया ॥ ५ ॥

लय—प्रभु मेरे मन बसियो रे

अमरपथ की साधिका

*

—साध्वीश्री सत्यप्रभाजी

अमर पंथ की सफल साधिका बन निखरी थी वह बाला।
चमक उठी जन-२ में ज्यों चमके नभ में विद्युत माला ॥

ज्यों ही चरण बढ़े संयम पर, जीवन को नव मोड़ दिया
पाकर नव उन्मेष सदा संवेग सुधा का - पान किया
ध्यान साधना के दीवट पर अन्तरतम को उजवाला ॥ १ ॥

वचन मधुरता आकर्षक चेहरा लगता सबको प्यारा
मिलनसार, व्यवहार-कुशलता से पूरित जीवन सारा
बना गई इस दुनियां में अपना अनुपम इतिहास निराला ॥२॥

चार मास पहले ही उसको मृत्यु का आभास मिला
गुरु तुलसी की शुभ सेवा का सुन्दर स्वर्णिम योग मिला।
वीर वृत्ति से प्राप्त हुई है वीरगति को यह बाला ॥ ३ ॥

छोटी सी जीवन झांकी में जिसने अनुपम साजसजा।
कुल पर कलश चढ़ाकर उसने फहराई है विजय ध्वजा।
युग-युग तक युग पहनायेगा श्रद्धा सुमनों की माला ॥ ४ ॥

सफल साधिका

—साध्वीश्री मंजुबालाजी

सफल साधिका बनकर सफल किया जीवन
अनायास बन फूल खिली तुम पाकर तुलसी का उपवन ॥ ध्रुव ॥

अल्प समय में ही जीवन में तुमने नूतन मोड़ लिया
ध्यान और स्वाध्याय से शाश्वत नाता जोड़ लिया
जाग उठा था तेरा सोया अन्तर मन ॥ १ ॥

व्यवहारों की दुनियां में तुम सबसे आगे रहती
जागरूक जीवन में सुखद् साधना की धारा बहती
मिलनसारिता से खिलता था हृदय चमन ॥ २ ॥

चमत्कार दिखलाकर तुमने सुयश पताका फहराई
सफल सेठिया परिवार जिसमें तुम जैसी कन्या आई
मोमासर का नाम किया तुमने गुलशन ॥ ३ ॥

लय—खड़ी नीम के नीचे।

मां के उद्‌गार

*

—श्रीमती चन्द्रावलदेवी सेठिया

सुता प्रवीणा याद यह करता तुम्हे समाज
मा की कुक्षी की रखी, पुत्री तूने लाज ॥१॥

जाना किसने था कि तुम यों कर दोगी परिहार
माँ की ममता ने लिया तव ही नया प्रकार ॥२॥

जो सोचा दिल में अटल, सफल किया संकल्प
हंसती खिलती ही कली टूटी बिना विकल्प ॥३॥

लेना तुमको था नहीं, सेवा का सिर भार
प्रत्युत तुम से जगत् ने, पाया अति उपकार ॥४॥

पुत्री तुमसे सीखलें, जीवन कला विधान
और मृत्यु का भी करें, हर पल हम सम्मान ॥५॥

तेरी उज्जवल छवि मुझे, करती सदा सचेत
गुरु तुलसी से ही मिला, अद्‌भुत पथ संकेत ॥६॥

मन खोया रहता है

—श्री पूनमचन्द सेठिया

वहिन तुम्हारी सुधियों में यह मन खोया रहता है।
चमत्कार दिखलाया तुमने, सारा जग कहता है !

देख तुम्हारी सहज साधना, दिल में पुलकन होती !
भ्रातृ-स्नेह जब तब जगता ये भोली आंखे रोती।
तुमने अपने जीवन में अद्भुत आदर्श दिखाया !
कष्टों को हंसकर सहने का साहस अभिनव पाया !
विवश व्यथाएं जीवन में प्रतिफल प्राणी सहता है ॥१॥

सबसे छोटी थी तुम घर में लगती सबको प्यारी !
उसकी मधुर चंचल हरकतें याद आ रही सारी !
समझाया दुलराया उसको डांटा अवसर पाकर !
हटे साधना से मन इसका कभी रूलाता जी भर।
किन्तु अडिग वह अपने प्रणपर पर्वत कब ढ़हता है ॥२॥

पूर्व सूचना दी मरने की पर न मुझे बतलाया !
परिवार का व्यामोह छोड़कर, जीवन सफल बनाया !
धन्य "वहिन" तुम सौभागी हम रिश्ता जुड़ा तुम्हारा !
गुरुवर के चरणों में तुमने अपना काम सुधारा।
शान्ति वरो तुम भैक्षव गण में, सुख निर्झर बहता है ॥३॥

काल जयी

*

श्रीमती विमलादेवी सेठिया

तुम चली गई हो ननद मृत्यु की दिखा जगत को राह।
क्या और अधिक तुमसे हम सबको हो सकती थी अन्तिम चाह ॥ ध्रुव ॥

जीवन से जो युद्ध कर न सके, वे काल जयी कर सकते हैं।
तब ही तो उसके चरणों में अगणित जीवन ये झुकते हैं।
लघु वय में तुमने दोनों पथ का कैसा सुखद किया निर्वाह ॥१॥

भौतिक तेरे तन दर्शन की तस्वीर सामने देख रहे
पर दिव्य रोशनी जीवन की जो उसके शुभ उल्लेख रहे।
है मोह मगर हम भी फिर क्यों भौतिकता की करते हैं परवाह ॥ २ ॥

गुरु करुणा चरण शरण पाकर तुम हमें स्मरण कब करती थी।
हर कदम मृत्यु की विजय सफर पर हंसती-हंसती धरती थी।
भगवान् जगा तेरे शिशु दिल में तू मिटा चुकी तब ही जग दाह ॥ ३ ॥

हम करें सतत् अनुगमन मात्र कर्त्तव्य हमारा यही रहा!
तुमसे कभी न ले पाए शिक्षा, खेद हृदय में यही रहा!
परिवार, संघ, संस्था को तुमसे, मिला अनोखा ही उत्साह ॥ ४ ॥

लय—हम आग बूझाने वाले हैं

प्रेरणा मंत्र

*

—श्री खुमानचन्द पटावरी

उस मौके पर मैं ही फिर इस मौके पर मैं ही रे।
देख साथी देख कैसा योग तो मिला ॥ ध्रुव ॥
साली थी वह मेरी उसका, मैं "खुमान" वहनोई तो।
सम्बन्ध जुड़ गया गाँव-२ में, नदी नाव वत् कोई तो।
लाड़ प्यार से पली पुसी वह फूल तो खिला। देख...॥१॥
पिछले शुभ संस्कार जगे हैं, धार्मिक रुचि उमड़ाई है।
हुई भावना संयम की तब, उसको खूब तपाई है।
कहने सुनने पर भी उसका दिल न हिला। देख...॥२॥
पारमार्थिक शिक्षण संस्था में, मैं ही पहुंचाकर आया।
उसके चरमोत्सव पर मैं ही पुर-चन्देरी पहुँचाया।
सावन महिना पहले अब भी सावन तो मिला। देख...॥३॥
चली गई वह एक नया इतिहास जोड़कर शासन में।
उद्‌बोधक लिख अलख झलक वह, विश्वास भर गई जन-२ में।
सजग-रहो पग-२ पर मानव जीवन तो मिला। देख...॥४॥
गौरव हमको है परिजन को, इस धरती के कण-२ को।
गुण गाथा गा गा कर उसकी, सफल करें हम क्षण-२ को।
मंत्र प्रेरणा एक अनोखा हमको तो मिला। देख...॥५॥

लय—बोल राधा बोल संगम

विरल कहानी

—श्रीमती विजयादेवी पटावरी

जीवन एक निशानी, प्रवीणा की विरल कहानी
जब भी याद करूँ आँखों में, भर-भर आता पानी ॥ध्रुव॥
निश्चल तेरी वह मुस्कान, आकृति रहती थी अम्लान
मधुर तुम्हारे वे व्यवहार नैसर्गिक सुन्दर संस्कार
रह-रहकर जब आते याद, छा जाता क्षण एक विषाद
कहाँ मिलेगी सुनने को वह तेरी मीठी वाणी ॥ १ ॥
नहीं हुआ हमको विश्वास, प्रवीणा ले लेगी सन्यास
बाल सुलभ थी चंचलता, मन की, तन की कोमलता
संस्था में जब किया प्रवेश, परिवर्त्तन कर लिया अशेष
समझ न पाई कहाँ गई वह, बचपन की शैतानी ॥ २ ॥
चली गई तू हमसे दूर, रख न सके हम थे मजबूर
मर कर भी तू अमर बनी, दीप-शिखा बन बहन जली
संस्था का नूतन इतिहास, बना तुम्हारा सफल प्रयास
पाकर तुमसी बहन बने हम, सचमुच ही अभिमानी ॥३॥
अन्तिम क्षण का पूर्वाभास, मिला तुम्हें जो दिव्य प्रकाश
विस्मित है उससे संसार, खुला नया श्रद्धा का द्वार
तुमने अपना पथ पाया, 'औरों को भी दिखलाया
तुम जैसे इस युग में थोड़े होते हैं बलिदानी ॥ ४ ॥

लय—बच्चे मन के सच्चे।

पाया है दिव्य उजाला

—सुश्री राजकुमारी सेठिया

साधा है सच्चा अपना,
जीवन का लक्ष्य सुनहला
तम तोम चीरकर तुमने
पाया है दिव्य उजाला

था हृदय तुम्हारा मानो,
गंगा की निर्मल धारा।
वैराग्य पूर्ण जीवन का,
गाता है कण-कण सारा।

है चार मास पहले ही,
पाए दर्शन शक्ति के।
जाने थे तुमने अपने,
अन्तिम क्षण ये जीवन के

क्षण भंगुर सुख ये जग के,
झूठी है दुनिया सारी।
थी लगन लगी तब से ही,
आत्मा की ओर तुम्हारी।

श्रावण शुक्ला बारस को,
यह पार्थिव तन भी छोड़ा।
उस स्वर्ग लोक के पथ में,
जीवन रथ तुमने मोड़ा।

संस्था को गौरव तुझ पर,
नूतन इतिहास गढ़ाया।
बाईस वर्षों में ऐसा,
नहीं अवसर हमने पाया।

शत् शत् श्रद्धांजलि अर्पित,
करती है हम सब तुझको।
कर्मों की तोड़ जंजीरें,
पाएं हम भी मंजिल को।

लय—रो-रो कर सिसक

कन्या मण्डल की ओर से

•

—सुश्री सुषमा कुमारी

प्रवीणा (चम्पा) बाई री स्मृतियाँ पल पल म्हाने आसीसा ।

रसना तो म्हारी बारां गुण गासीसा । प्रवीणा......॥ध्रुव॥

विरति निराली बारो, स्फुर्ति निराली ।

भक्ति निराली बांरी शक्ति सवाइ । हो भगिनी भक्ति......

कोमलता प्यारो बांरी मधुरता प्यारी ।

अच्छी विवेक स्यूं योग्यता पाई । हो भगिनी......॥१॥

बोली जोशीली बांरी, भाषण शैली न्यारी ।

संयोजन री कला अलबेली । हो भगिनी...........

कविता बनाता वे तो, ढालां बनाता ।

करता लेख लिख पूरी पहेली । हो भगिनी........॥२॥

कन्या मण्डल ने साझ बहुत मिलतो ।

खिलतो उपवन रुपक करता । हो भगिनी.........

सिखाने पढ़ाने को उद्यम आच्छो ।

शिक्षा रस रा झरना ही झरता । हो भगिनी.........॥३॥

चार महीने रो बांरो, जीवन चमकतो ।

वण्यो इतिहास में पहलो यो मोको । हो भगिनी...........

मधुर संस्मरण सारा, याद म्हें करस्यां ।

खिलसी ओ म्हारों हृदय झरोखो । हो भगिनी......॥४॥

स्मृति-लोक की उज्ज्वल तारिका

*

—सुश्री सुषमा कुमारी

संस्मरण जीवन उद्यान की क्यारियों में विकसित सुमन है, जिसकी मधुर सुवास वातावरण को सुगन्धित बना देती है। इन सुमनों के सौंदर्य से ही जन जन उद्यानों के प्रति आकर्षित होता है। जीवन में घटित होने वाली छोटी-छोटी घटनाएँ व्यक्तित्व के विराट स्वरूप को अभिव्यक्त करने वाली होती हैं। बहिन प्रवीणा का लघु जीवन अद्‌भुत घटनाओं से परिपूर्ण है। वे सब आज भी मेरे स्मृति लोक में उज्ज्वल तारिकाओं की तरह चमक रहे हैं।

अविस्मरणीय क्षण

सुजानगढ़ : दिनांक १६-४-३१ को रात में बहिन प्रवीणा को एक अत्यन्त मधुर आवाज आई "सोई हुई हो या जागती हुई, ध्यान करने का समय हो गया है। फिर वापिस आवाज हुई "चार महीने और है फिर कुछ नहीं होगा।" यह सुनते ही वह चौंककर उठी तथा चारों ओर देखा पर दृष्टिगोचर कुछ भी नहीं हुआ। कुछ देर तक मधुर सुगन्ध आती रही फिर वह आनी बन्द हो गई। एक दिन तक वह संसार की नश्वरता को देखती हुई मन ही मन आत्मोत्थान का मार्ग सोचने लगी। किन्तु उसे लक्ष्य प्राप्त करने का कोई भी मार्ग नहीं मिला। वह सोचती थी कि

इतने कर्मों को चार महीनों में कैसे काटूँगी ? यह विचार करके वह मेरे पास आई और सारे वृत्तान्त को सुनाया। मैंने उत्तर दिया—इस विषय में मैं आपसे क्या कह सकती हूं ? शायद हो सकता है कि आपको सावधान करने के लिये किसी सम्यक्तवी देव ने मृत्यु के इतने दिन पूर्व हो कह दिया हो या तुम रात में २ वजे ध्यान करती हो इसलिये कोई स्वप्न में जंजाल आ गया हो। मैं एक दो उदाहरण देकर अपने कार्य में जुट गई।

फिर दिनाक १९-४-७१ को वहो दो वजे का समय था, मधुर मधुर सुगन्ध आ रही थी और मधुर ही आवाज—

'चार महीने के वाद एक 'हींच' आएगी जिससे वचना दुर्लभ है। अगर नहीं वची तो घवराने की कोई वात नहीं। आखिर एक दिन जाना तो है ही।" इतने में नींद खुल गई। दूसरे दिन प्रातः ही उसने मुझसे सारी वात कही। तव मैंने कहा—तव तो आपको वहुत सचेत रहना चाहिये, हर वक्त भावों की शुद्धि रखनी चाहिये, ध्यान, स्वाध्याय, जाप आदि आत्मोत्थान के कार्य करने चाहिये।

अमिट स्मृति

दिनांक २१-४-७१ को प्रवीणा लेटी हुई थी। ३ वजे का समय था सदा की तरह आवाज आई और कहा—"पुत्री ! घवराओ मत, शीघ्रता करो, कार्य में समय थोड़ा है, अल्प समय में ही भावों की शुद्धि रखती हुई अपने चरम लक्ष्य को प्राप्त करो। तुम्हें चार महिने पहले ही सावधान कर दिया है। इस सारी घटना को प्रवीणा ने मेरे सामने रखा मैंने वापिस वहो आत्मोत्थान की कुछ वातें वताईं। वह आत्म-साधना करने में तल्लीन हो गई।

ग्राम पड़िहारे में रात्रि की गोद में लेटी हुई थी, हमेशा की तरह

आवाज सुनाई दी कि "सावधान रहना और कहा–जिसको दिखाना है आज उसे दिखा देना। उसने मुझे और प्रभा बाई को जगाया। हम दोनों ने भी उस समय मधुर सुवास का अनुभव किया और वापिस लेट गई।

दिनांक २१-५-७१ को ग्रीष्म की छुट्टियां हो गई। घर पर भी दो तीन बार इसी प्रकार की आवाज हुई थी और कहा—तुम यहाँ पर तो स्वतन्त्र हो। इच्छानुसार कर सकती हो। तब उसने तपस्या प्रारम्भ की। १५ दिन तक निरन्तर आयम्बिल किए। १० पचकान किये। तीन दिन का निरन्तर मौन, दिन में पाँच घण्टे का ध्यान धूप में, ६ उपवास चो विहार, दिन में नव द्रव्यों से अधिक नहीं खाती थी, तम्बौल का बिल्कुल त्याग। इस प्रकार घर पर साधना काफी की, मुझे आकर सारी बातें कहीं और यह भी कहा कि यहाँ पर आज्ञा नहीं मिलती है सो तुम बताओ किस प्रकार मिल सकती है। मैंने कहा—यदि आप पूछ सकती हो तो संयोजक महोदय से आज्ञा मांग लो और तो कुछ नहीं हो सकता है।

दिनांक २-८-७१ को रात के बारह बजे का समय था। अचानक ही स्वामी जी ने दर्शन दिए तब प्रवीणा ने कहा—"आप का क्या नाम है उन्होंने कहा—"मधु स्वामी"। स्वामी जी ने कहा कि दि० ३-८-७१ को दिन के बारह बजे हींच आने वाली है उसमें तेरा बचना कठिन है। तुम एक-एक घण्टा के त्याग करती रहना। एक साथ संथारा (आमरण अनसन) मत करना। इस प्रकार सारी बातें प्रातः उठते ही ८ बजे मुझे और प्रभा-बाई से कही। हमें विश्वास ही नहीं हुआ कि इस प्रकार दो घंटे में बीमार हो जाएगी, इतनी वेदना होने पर भी चेहरे पर उदासी का नाम निशान भी नहीं था। चेहरा मुस्करा रहा था। चार महीनें पहले ही मृत्यु का आभास होने पर भी मृत्यु का भय तो कभी लगा ही नहीं। मैंने कहा–तब संयोजक महोदय से कह दें क्या ? उसने कहा–नहीं, क्योंकि अनिश्चित है। मैंने कहा–अनिश्चित है तो क्या हुआ बचने की तो आशा ही नहीं? अगर

दीक्षा आ जाए तो आपके मन में नहीं रहेगी। आपने जिस लक्ष्य को प्राप्त करने को कदम उठाया था वह लक्ष्य प्राप्त हो जायेगा। लेकिन संयोजक महोदय हमारी दीक्षा की बात अभी कहां सुनते हैं। वे तो समय को अभी लम्बाते ही जाते हैं। उनको कितनी बार निवेदन किया। वे सुनते कहां हैं? तब उसने कहा—संयोजक सा को उपालम्भ देने से क्या होगा। देना भी फजूल, क्योंकि जब चारित्र मोहनीय का क्षयोपसम ही नहीं है तो दीक्षा आयेगी कैसे? फिर कहा—अब समय बहुत कम है, मुझे ध्यान स्वाध्याय, जाप करने हैं, फिर कुछ क्षण मौन रह, मुझसे कहा—आपको क्या चाहिये? मेंने उत्तर दिया "आत्मशक्ति"। अपनी बात को जारी रखते हुये कहा—

१— जो भी संस्था में नियम बने वे स्वयं पर लागू करना।

२—अधिक महत्व पढ़ाई पर न देकर साधना पर देना।

३—तुम्हारा शरीर कमजोर है अधिक ध्यान रखना क्योंकि साधना इससे करनी है। उस दिव्य आत्मा ने इस प्रकार आत्मिक स्नेह उडेलते हुए कहा।

विनोदी शिकायत

व्यक्ति चला जाता है, परन्तु उसकी कई बातें ऐसी रह जाती हैं जिसकी सदा सदा के लिये दूसरों को याद आती रहती है। अन्य सभी घटनाओं के बावजूद मुझे रह रह कर प्रवीणा की शिकायत याद आती है। उन्होंने मुझे कहा कि देखो सुषमा बाई! आपको पढ़ाती तो मैं हूँ और परीक्षा में नम्बर ज्यादा प्राप्त करते हैं आप। यह कैसे सहा जाए?

उस सयय तो मैं उनकी बात हँसकर टाल देती। परन्तु आज दिल तड़फ कर रह जाता है अपना ओलम्मा सुनाने के लिये। फिर भी हिम्मत

करके में स्वर्ग स्थित बहिन प्रवीणा को अपना मधुर उपालम्भ सुनाना चाहती हूं कि देखो प्रवीणा बाई ! ध्यान करना सिखाया तो मैंने और नैया पार कर ली आपने, यह कैसे सहा जाए ?

अनुकरणीय सेवा भावना

हमारी संस्था की एक बहिन बीमार थी। तब एक दिन हम उनके लिये टमाटर का रस निकाल रही थी। मैंने उससे कहा कि सारा समय इनकी सेवा में व्यतीत हो जाता है। तब उन्होंने वापिस कहा—'नहीं, ऐसा नहीं सोचना चाहिये। सेवा से तो हमारा समय सार्थक होता है। रोगी को समाधि मिलती है। रुग्ण की सेवा करना हमारा कर्त्तव्य है। उन्होंने मुझे इस प्रकार बहुत ही सरल ढंग से सेवा का अर्थ समझाया। इस ज्वलन्त उदाहरण से हम आंक सकते हैं कि उसके रग रग में सेवा भावना कितनी रमी हुई थी।

अप्रदर्शन भावना

वह लोक व्यवहार का बहुत सूक्ष्म ध्यान रखती थी, वह ऐसी कोई बात नहीं करना चाहती थी जिससे किसी के मन में हीन भाव जगे और स्वयं में अतिरिक्तता का अनुभव हो।

एक दिन उसने मुझे पूछा—आप कपड़ों में नील क्यों नहीं देती हो ? मैंने कहा—ऐसे ही। उसने कहा—पाप लगता है क्या ? मैंने कहा—मैं तो कहती नहीं कि पाप लगता है। उसने कहा—हमारा सामुदायिक जीवन है फिर सभी देती हैं और आप नहीं दे रही हैं, इसका मतलब है कि केवल आप ही विरक्त हैं।

अब मैं क्या उत्तर देती। उनकी स्पष्टवादिता और तीखे शब्दों ने मेरा व्यवहार बदल दिया।

अद्भुत सहनशीलता

सहनशीलता उनमें कूट कूट कर भरी हुई थी। केवल बीमारी को ही सहने में क्यों, कटु वचन सुनसे में भी उसकी अद्भुत क्षमता थी।

कुछ दिन पहले हम दोनों ही अस्वस्थ थीं। हम दोनों ही के विस्तर पास में थे। अचानक उनके हाथों में खराउ के घावों से टप टप रक्त गिरने लगा। मैंने कहा—दवा लगा लीजिये ना। उत्तर मिला—लगा लेंगे क्या शीघ्रता है। इतनी भयंकर पीड़ा में भी वह अपने शरीर के प्रति बहुत अनासक्त थी।

संस्था के प्रति अनुराग

प्रवीणा बहिन को संस्था पर बहुत गौरव था। वास्तव में उन्होंने अन्तिम समय में अपने गौरवमय जीवन से संस्था के गौरव में चार चाँद लगा दिये।

वे प्रायः कहा करती थीं—देखो, हमें संस्था पर नाज होना चाहिये। जो भी संस्था के नियम हैं उसको हृदय से धारण करना चाहिये, न कि जबरदस्ती से थोपे गए मानने चाहिये। संस्था में विनय की भावना व पारस्परिक सौहार्द्र बढे उसके लिये सजग रहना चाहिये। जब हम संस्था के प्रशिक्षण से उत्तीर्ण हो जाएँगी तब ही हम दीक्षा के योग्य हो सकेंगी।

उनकी एक एक बात से संस्था के प्रति स्नेह और अनुराग टपकता था। वे बाहर भी कहीं जाती थीं तो संस्था के गौरव को अभिव्यक्त करना नहीं भूलती।

कुमारी प्रवीणा के लघु जीवन की स्मृति जब कभी भी मानस पर उभरती है तो सहसा मानस आनन्दातिरेक से भर जाता है।

जागृत जीवन की कथा

—सुश्री प्रभाकुमारी जैन

जीवन हर कोई जीता है लेकिन जिसके जीवन और कर्म से किसी का जीवन जागृत हो जाये वह जीवन सचमुच आदर्श कहा जा सकता है। बहिन प्रवीणा अपने लिये नहीं जी रही थी। उसने अपने कर्म के साथ-साथ आस पास रहने वाली बहिनों से आत्मीय सम्बन्ध बनाया था। वह दूसरों के अध्ययन एवं विकास के लिये अपना सहयोग करने हेतु सदैव तत्पर रहती थी। मैंने उसके जीवन को निकट से परखा है और पाया है कि उसकी आत्मा में सहज औदार्य एवं कर्त्तव्यपरायणता थी। आज भी जब मैं उसके व्यवहार को स्मरण करती हूं तो हृदय सात्विक आनन्द से भर जाता है। मैं उनके जीवन के कुछ संस्मरण प्रस्तुत कर रही हूं जो जन जन को प्रेरणा प्रदान करने वाले हैं।

कर्त्तव्य के प्रति जागरूक

पड़िहारे की बात है। मैंने प्रवीणा से कहा—मुझे हेम-नवरत्नाकी एक ढाल पढा दो। तब उन्होंने कहा—ठीक है। फिर कार्य में व्यस्त होने के कारण वे पढ़ा नहीं सकीं। ग्रीष्मावकाश होते ही वे अपने ग्राम चली गई तथा मैं भी टमकोर आ गई। यहाँ मुझे प्रवीणा का एक पत्र मिला और यही बात लिखी थी कि मैं ढाल पढ़ा नहीं सकी इसलिये आप क्षमा करें। कौन सी ढाल पढानी थी वह मुझे लिखकर भेज दें। मैं उसका अर्थ लिख

कर भेज दूँगी। इस बात से यह प्रकट होता है कि वह कर्त्तव्य एवं अपने कहे हुए वचन को पूरा करने हेतु कितनी जागरूक थी।

स्वावलम्बन

लाडनूँ की बात है। प्रवीणा बहिन के हाथ की चमड़ी कट गई थी। उससे खून निकला करता था। उस समय किसी वस्तु को छूने मात्र से पीड़ा होती थी। फिर भी वह वक्त पर अपनी जूठी थाली मांज लेती थी। रुमाल अपने आप धोती थी, किसी को आज्ञा या कह कर काम करवाने की प्रवृत्ति उनमें नहीं थी। एक दिन मैंने उनसे कहा कि आप मुझे सेवा हेतु संकेत किया करें तो बहुत कृपा होगी। उन्होंने अत्यन्त विनम्रता एवं सहजता से उत्तर दिया कि तुम्हारा कथन ठीक है पर मुझसे कार्य हो सकता है तब आपको कैसे कहा जाए? रक्त-स्राव और शान्त चेहरा सहिष्णुता का अद्‌भुत सामंजस्य था। उनकी दिव्य आत्मा शीघ्रातिशीघ्र कर्मों की जंजीरें तोड़ अपने लक्ष्य को प्राप्त करें और हम भी उनकी विशेषताओं को शीघ्र ग्रहण करें।

शिक्षा की पूंजी

जिस दिन आपने यह नश्वर शरीर छोड़ा था उसी दिन सुबह दूध पीने के बाद जब मैं कोटड़ी (कमरे) में कण्ठस्थ करने बैठी तो सहसा प्रवीणा बाई आई। तब मैंने सोचा एक कोटड़ी में दोनों को एक साथ कण्ठस्थ नहीं होगा। यह सोचकर मैं उठ कर चलने लगी तो मुझे वापिस बुला कर कहा—"मैं कण्ठस्थ करने नहीं आई हूँ, मैं तो आपको एक बात बताने आई हूँ। उन्होंने मुझसे क्षमा याचना माँगी और कहा—'आज ही मेरी हींच आएगी।' फिर मैंने कहा—'कुछ शिक्षा फरमाइये'। तब उन्होंने पहले पूछा कि 'आपको क्या चाहिये?' तब मैंने कहा—आत्म-शक्ति। फिर फरमाया कि 'संस्था के नये नियम बने तो पहले अपने पर

लागू करना। इस बार परीक्षा में नम्बर कम थे इसलिये इस बार ज्यादा कोशिश करनी है। लेकिन आत्म-साधना पर विशेष ध्यान देना है।" फिर मैंने ध्यान के बारे में पूछा तो मुझे श्वास खींचकर ध्यान की विधि बताई और कहा—मुझे तो प्रथम बार यही ध्यान बताया था मुनिश्री सोभालालजी स्वामी ने, इससे मेरा ध्यान स्थित हुआ। फिर कहा—मेरे ध्यान में आया कि आपको निराशा आती है, इसको प्रतिदिन कम करना है। यह क्रोध की श्रेणी में है। यह शिक्षा मुझे संस्था में आने के बाद प्रथम बार ही दी थी। मैं अपना सौभाग्य मानती हूँ कि जाते समय मुझे मानों कुछ पूँजी सौंप दी हो।

आराध्य देव ! मुझे ऐसी शक्ति दें जिससे मैं उनकी अन्तिम शिक्षा को अपने जीवन में उतार सकूं और उनकी तरह अपने लक्ष्य को प्राप्त करूँ।

—०—

सहिष्णुता एवं समता की प्रतिमूर्ति

*

—श्रमती कंचनदेवी तातेड़

(अब साध्वीश्री कल्पनाश्री जी)

जीवन में वहुत कुछ घटित होता है। उस सबको शब्दों में गुम्फित नही किया जा सकता। शब्दों की अपनी सीमा होती है। वे अनुभूति की पूर्णतया अभिव्यक्ति नहीं हो सकते हैं। फिर भी अनुभूति को अनुभव के शतांश को शब्द द्वारा ही सुरक्षित रखा जा सकता है। उसके माध्यम से ही अन्तर-संकेत दूसरों तक पहुँचाया जा सकता है।

संस्मरण स्मृति कोष की अमूल्य निधि होती है। प्रवीणा वचपन से मेरी प्रिय सहेली रही है। उसके छोटे से जीवन के संस्मरण गुलदस्ते में सजे हुए गुलाव से सुन्दर हैं जिसकी मधुर महक से आस पास का वातावरण सुगन्धित हो गया।

जीवन सभी जीते हैं किन्तु आलोकित जीवन कोई विरल चेतना ही जीती है। मेरे अन्धकार से घिरे पथ को उसने ही आलोकित किया। उसकी एक एक शब्दावलि आज भी कर्ण कुंडलों में गुंजित हो रही है। उसकी एक एक घटनायें आँखों के सन्मुख चित्र-पट की तरह उपस्थित हो रही है। प्यारी प्रवीणा ! तूं विष पीने के लिये मीरा थी। सहिष्णुता के लिये सीता थी। मेरे लिये तू ही आदर्श और प्रेरक रही है। तुम्हारी

एक एक स्मृति स्वप्नों की अपार कड़ियों वाली शृंखला है। तुम्हारी तितिक्षा, सहिष्णुता, समता मेरे रोएँ रोएँ में जागे केवल, एक ही कामना है।

सच्ची धर्म सहेली

शास्त्र श्रवण में आता है कि सच्चा मित्र वही है जो अपने मित्र को सत्पथ की ओर ले जाये, वस्तुतः प्रवीणा मेरी सच्ची सखी थी। उसी ने मुझे शिक्षा दीक्षा के लिये प्रेरित किया।

मैं और प्रवीणा साध्वी श्री के उपपात में बैठी सत्संग का रसास्वादन ले रही थी। साध्वीश्री ने कहा—चम्पा! कल संस्था में जा रही है। यह दीक्षा लेगी। तूने क्या किया? इस प्रश्न से मेरा मन उद्वेलित हो उठा। मैंने बिना सोचे समझे साध्वीश्री को बात करते हुए उत्तर दिया—यदि चम्पा दीक्षा लेगी तो मैं भी दीक्षा लेने को तैयार हूँ, चाहे जैसे भी क्यों न हो? चम्पा ने मुस्करा कर कहा—बाई! ब्याह नहीं कराणो है। मैंने तिलमिलाकर कहा—भविष्य ही बतलायेगा कि क्या करना है। मेरी स्मृति पर मुहर लगा देना। उसने कहा—अच्छा तो पक्की रहना।

जब भी अवसर मिलता, वह मुझे प्रेरणा देती। परिवार से जब मुझे दीक्षा की अनुमति मिल गई तो उसको बहुत ही प्रसन्नता हुई। जब वह आइसर आती तब मेरे ससुराल वालों को मधुरता से समझाती। उसका वाक्चातुर्य, व्यावहारिक ज्ञान देख मैं दंग रह जाती। उसने अन्तिम क्षण तक शिक्षा दीक्षा के लिये प्रयत्न किया।

दिल में रह रह कर आता है, काश! प्रवीणा मेरी दीक्षा तक तो रहती। अपने पवित्र हाथों से ही मंगल तिलक निकाल कर मुझे अपने लक्ष्य की ओर भेजती। किन्तु होनहार कुछ और ही था।

भविष्य के गर्भ में

विधाता ने शारीरिक सौन्दर्य प्रदान करने में भी प्रवीण के लिए बड़ी उदारता दिखाई थी। मंझला कद, गौर वर्ण, गुलाबी अधर, प्रसन्न वदन सहज ही मिलने वालों के मन पर एक अमिट स्मृति छोड़ जाता। उसकी स्वच्छ धवल दन्त पंक्तियाँ भी हंसमुख चेहरे की अतुलनीय शोभा बढ़ा देती थी।

एक दिन मैंने प्रसंगवश उसको कह दिया—प्रवीणा! तुम्हारे होठ बहुत लाल रहते हैं। उसने विनोद भरी वाक्यावलि में कहा—तू नहीं जानती कंचन! गुलावी होठ होनहार के ही होते हैं।

उस समय किसने सोचा था कि इस छोटे से वाक्य के गर्भ में कितना रहस्य भरा है परन्तु आज सोचती हूं तब अनुभव होता है कि सचमुच उसने जो कुछ कहा था वह कितना सत्य और यथार्थ था। आज भी वे गुलावी अधर मेरे स्मृति पटल पर नर्तन कर होनहारिता का दिग्दर्शन करा रहे हैं।

कुशाग्र बुद्धि की एक झलक

मोमासर नाम का एक छोटा किन्तु पावन कस्बा है। साध्वियों का पवित्र धर्म जागरण का केन्द्र, साध्वी श्री के सानिध्य में पांच सात वहिनों की एक लघु भाषण गोष्ठी चल रही थी। वहिनों को भाषण का विषय दो दिन पहले ही दे दिया गया, इसलिए हमने अपने भाषण का खूब अभ्यास कर रखा था, किन्तु प्रवीणा को इस गोष्ठी की पहले सूचना नहीं थी, जब साध्वी श्री ने उसको बोलने के लिए कहा तो वह बिना नानुच किए ही "आचार्य तुलसी जीवन और दर्शन।" पर बोलने लगी। वहिनों ने कहा—महाराज! यह तो कोई भाषण नहीं है, पुस्तक के पृष्ठ दोहरा रही है। साध्वी श्री ने प्रवीणा को रुक जाने के लिए कहा। परन्तु प्रवीणा रुकी

नहीं। तत्काल उसने विषय बदल "अहिंसा" पर अपना भाषण प्रारंभ कर दिया।

उसकी प्रतिभा का अंकन इस छोटे से उदाहरण से ही आंका जा सकता है। उस समय उम्र केवल बाहर वर्ष की थी।

साहस भरी स्पष्टवादिता

स्पष्टवादिता उसका सहज गुण था। किसी समय कौनसी बात कहनी चाहिए यह बात वह खूब जानती थी। किसी की कोई गलती देखती तो वह झट सचेत कर देती।

मेरी कक्षा की किसी बहिन ने प्रवीण व अन्य बहिनों के सम्मुख कोई शिकायत की। दो दिनों तक प्रवीणा ने मुझे कुछ नहीं कहा। तीसरे दिन उसने मुझे सारी बात कही। मैंने कहा—तुम मेरी सभी कक्षा की बहिनों से पूछ लो, यदि यह बात सत्य हो तो मैं मेरी भूल के प्रायश्चित स्वरूप एक उपवास कर लूंगी। उसने प्रच्छन्न रूप से मेरी कक्षा की सभी बहिनों से पूछ-ताछ की किन्तु सत्य हो तो कोई स्वीकार करे।

दूसरे दिन सभी बहिनें सामूहिक रूप से धनिया साफ कर रही थी। अवसर देख कर प्रवीणा ने सबके सामने शिकायत करने वाली बहिन से पूछा। अब तो वह बहिन सकपका गई। वह कुछ बोलती कि सभी बहिनों ने इस बात को अयथार्थ बतलाया। प्रवीणा ने उस बहिन को सावधान करते हुए कहा—साधना के क्षेत्र में यह सब बातें उचित नहीं है। आज तुमने कंचन की शिकायत की है, कल किसी और की भी कर बैठोगी।

कुछ समय पश्चात् प्रवीणा से मैंने कहा—तुम्हें मेरी बात को ले कर किसी को कुछ नहीं कहना चाहिए।

उसने झट उत्तर दिया—मैंने किसी का पक्ष नहीं लिया है। जिसकी गलती हो उसे बताने में क्या संकोच है? किसी की बुराई को नहीं बताने का मतलब हुआ बुराई को प्रोत्साहन देना।

मुझे उसकी साहस भरी स्पष्टवादिता से सुखद आश्चर्य हुआ।

मर्यादा ही हमार श्वास है

वही संस्था सुगठित और व्यवस्थित रह सकती है जिसके सदस्य छोटे-छोटे नियमों को भी अपना प्राण समझते हों। मर्यादा के प्रति प्रवीणा का गहरा अनुराग था। छोटे से छोटे कार्य में मर्यादा को अत्यधिक सम्मान देती थी। पारमार्थिक शिक्षण संस्था में प्रविष्ट हुई ही थी। सारा वातावरण नया-नया लग रहा था। कुछ नियम भी अटपटे लग रहे थे। प्रवीणा ने मुझे पूछा—संदूक को खुला ही तो नही छोड़ा है? नहीं तो नियम भंग हो जायेगा। मैंने सहज ही कह दिया 'वाह' ये क्या नियम हैं। तत्काल वह मुझे डाँटती हुई बोली—नहीं कंचन! इस प्रकार नियमों की मजाक नहीं करनी चाहिये। ये नियम ही हमारे जीवन के आधार हैं। छोटे नियम ही लापरवाही से बचाते हैं।

आखिर मैं क्या बोलती? अपनी वाचालता पर पश्चाताप के सिवाय और चारा ही क्या था।

बड़ा शादी से नहीं-साधना से

भारतीय संस्कृति में व्यक्ति बड़ा त्याग से होता है न कि भोग से, यह प्रेरणा दे गयी, मुझे मेरी प्रिय बहिन प्रवीणा।

अभी हाल में ही वह मुझे संस्था में कैसे रहना चाहिये आदि-आदि बातों से परिचित करा रही थी। प्रसंगवश उसने मुझे कहा—सवेरे-सवेरे

सभी बहिनों को प्रणाम करना है। अचानक मेरे मुंह से निकल गया- इतनी छोटी-छोटी बहिनों को प्रणाम करते मुझे तो संकोच आयेगा।

बात छूटते ही उसने तपाक से उत्तर दिया—"तुम तो बहुत बड़ी हो ना इसलिए संकोच तो आयेगा ही। बहिन! बड़ा शादी करने से नहीं साधना करने से होता है"।

मेरे बड़प्पन का गर्व उसके एक वाक्य से ही समाप्त हो गया।

सीमातीत सरलता

साधना वही कर सकता है जो सांसारिक कार्यों से निर्लिप्त हो। निर्लिप्त वही आत्मा रह सकती है जिसकी आत्मा सरल होती है। प्रवीणा के लिये शारीरिक रीति-रिवाज बिल्कुल अनभिज्ञ थे। प्रारम्भ में ही उसका झुकाव साधना की ओर हो जाने के कारण उसको संसार संबन्धी ज्ञान नहीं के बराबर था।

अभी दो साल पहले उसके बड़े भाई को पुत्र हुआ, इसलिए इस शुभ अवसर पर प्रवीणा की बड़ी बहिन विजय देवी जन्मोत्सव के उपलक्ष में घुघरी (उबले हुये गेहूँ) लेकर आई। (राजस्थान में भुआ भतीजे की खुशी में उबले हुये गेहूं और गुड़ घर घर बांटती हैं।)

भोली-भाली प्रवीणा ने भी हठ पकड़ लिया—"मैं भी घुघरी बांटूंगी।" घरवालों ने समझाया—अरे! घुघरी तो शादी सुदा बांटती हैं और तुम तो ठहरी कुमारी, साधना रत साधिका भी। यह सुनते ही उसका आग्रह बाल सुलभ सरलता में बहने लगा।

विशालता की तह में

विद्वान बनना सरल है परन्तु उदार बनना सरल नहीं। जो व्यक्ति

चन्दन की तरह स्वयं घिसकर भी दूसरों को सौरभ देता है वही वास्तव में महान होता है।

साध्वी श्री मंजुबालाजी जो कि प्रवीणा की संसार पक्षीया बड़ी बहिन है, उन्होंने एक बार प्रवीणा से कहा—आजकल तुम्हारी परीक्षा चल रही है। अगर तुम यहाँ पढ़ना चाहो तो मेरे पास समय है।

उसने विनम्रता पूर्वक कहा–महाराज ! मैं यहाँ कैसे आ सकती हूं ? मैं यहाँ आ जाऊँगी तो मेरी कक्षा की बहिनें पढ़ाई में पिछड़ जायेंगी। क्योंकि हम सब साथ साथ अध्ययन किया करती हैं।

उसके ये उदार और विशाल विचार सुनकर मैं तो सन्न रह गई। सचमुच प्रवीणा में मिलना सारिता, वाक्पटुता तो थी ही साथ ही साथ उसका हृदय भी बहुत उदार था। वह सदैव दूसरों को सहयोग देने में प्रसन्नता का अनुभव करती थी।

असाधारण तिलक

शुद्ध और पवित्र दिल से जो कार्य किया जाता है वह कार्य हमेशा सफल होता है। प्रवीणा का हृदय पवित्र और सरल था। वह सहजता से जो भी बात करती वह पूर्ण हो जाती।

छुट्टियों के दिनों में हम तीनों (मैं, अनीता और प्रवीणा) बैठी थी। पता नहीं प्रवीणा के दिल में बैठ बैठे क्या आया कि उसने एक लाल पेंसिल लेकर मेरे तिलक निकालते हुए कहा—कंचन ! अब तुम शीघ्र ही गुरुदेव की सेवा में चली जाओगी। मैंने तिलमिला कर कहा—प्रवीणा ! क्यों जले कटे पर नमक छिड़क रही हो। उसने कहा—नहीं कंचन, मेरी बात पर विश्वास करो।

संयोग की बात है दूसरे ही दिन हम लोग सपरिवार आचार्य प्रवर के दर्शनार्थ चले गये। सौभाग्य से वहां मुझे परिवार द्वारा पा० शिक्षण संस्था में अध्ययन और साधना करने की आज्ञा मिल गई। काश! आज वह होती और मेरे ललाट पर दीक्षा तिलक निकाल कर अपनी वाक् सिद्धि का आनन्द अनुभव करती।

समता का एक रूप

"धर्म है समता हमारा" यह वाक्य हम अर्हत् वन्दना में सदैव गाते हैं परन्तु गाना एक बात है तथा अपने जीवन व्यवहार में लाना दूसरी बात है। प्रवीणा ने इस वाक्य को केवल गाया ही नहीं अपितु अपने जीवन में भी साकार किया था।

भाद्र शुक्ला पूनम का दिन था। मैं प्रतिक्रमण करने बैठी ही थी कि प्रवीणा की पदध्वनि कानों में पड़ी। वह जोधपुर से मोमासर जा रही थी। लाडनूं में उतरकर मिलने हेतु मेरे घर आई। प्रवीणा को देखकर मेरा मन प्रफुल्लित हो उठा। किन्तु परिवार के अन्य सदस्य उसके इस अनायास आने से प्रसन्न नहीं थे। क्योंकि उन दिनों मेरी दीक्षा लेने की भावना से घर का वातावरण व्यग्र था। उन लोगों ने सोचा, यह प्रवीणा ही मुझे दीक्षा के लिए प्रेरित करती रही है। प्रवीणा को भी पारिवारिक जनों ने डांटा कि तुम लोग इसके पीछे क्यों पड़ी हो। परन्तु वह सिर्फ मुस्कराती हुई उनकी बातों का उत्तर देती रही तथा जाते समय समय उसने सबों से क्षमा याचना की। बस स्टेण्ड तक उसी प्रकार कहने-सुनने का क्रम जारी रहा। मैंने आंखे भरकर कहा—'चम्पा! कोई विचार मत करना तथा आगे मेरे घर मत आना। वह हंसकर बोली—इसमें विचार करने की कौन सी बात है, मैंने भी देख लिया कि तुम्हें क्या-क्या सुनने को मिलता है।

दीक्षा के पूर्व परिवार के लोग विभिन्न तरीकों से दीक्षार्थिनी की परीक्षा लेते हैं कि दीक्षार्थी प्रतिकूल परिस्थितियों में भी कितना धीर और शान्त रह सकता है। बीदासर मर्यादा-महोत्सव पर मैं आचार्य प्रवर के दर्शन करना चाहती थी। आचार्य श्री का स्वास्थ्य ठीक नहीं था, अतः दीक्षा का निवेदन कैसे हो? मेरे पास कोई विश्वस्त सूचना नहीं थी। मैं कुछ चिन्तित थी। अचानक प्रवीणा आई और मैं स्तब्ध रह गई। मेरे मुखसे सहसा निकला—"तू यहां क्यों आई? तुम्हें पिछली घटना याद नहीं।" उसने तत्काल उत्तर दिया—इसमें याद रखने की क्या बात थी? हम साधक हैं, सुनना और सहना हमारा धर्म है। मैंने सोचा आचार्य प्रवर के समाचार जानने को तुम उत्सुक होगी और यहाँ चली आई।

इतने में जेठसा आ गए। तत्क्षण उसने मेरे से बोलना छोड़ जेठसा को प्रणाम किया तथा उनसे बातें करने लगी।

उसकी यह अद्‌भुत-समता देख कुछ क्षण के लिए मैं स्वयं समता सरोवर में डूब गयी। उसका यह उदाहरण सदा-सदा के लिए मुझे नव्य प्रेरणा देता रहेगा।

सूझ बूझ की धनी

बुद्धि वही सराही जाती है जो समय पर काम दे। प्रवीणा की प्रतिभा ऐसी तीव्र थी कि वह अवसर चूकने नहीं देती थी।

मैं तेरापंथ स्थापना दिवस पर निबन्धों का एक..संकलन आचार्य प्रवर के चरणों में भेंट करना चाहती थी। मैंने अपने सभी ससुराल वालों को वहां रोक रखा था कि आप आज आडासर न जाएं मैं कल इस संकलन को भेंट करूंगी।

कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। वक्ता बोलने लगे, परन्तु मेरा नाम संयोजक के पास नहीं पहुंच सका, मेरा मन निराश हो गया, परन्तु प्रवीणा ने मेरे निराश चेहरे को पढ़ लिया। एक ओर आचार्य प्रवर के अमृतोपम प्रवचन की वर्षा हो रही थी और इधर प्रवीणा कुछ चिन्तन में निमग्न थी। आखिर उसने अपना ध्यान प्रवचन से हटाकर एक चिट लिखी और उसे किसी प्रकार संयोजक मुनि श्री किशनलालजी के पास पहुंचा दिया। मेरा मन अपने आराध्य देव के चरणों में छोटी सी भेंट चढ़ा कर कृत-कृत्य हो रहा था! प्रवीणा की सूझ बूझ की स्मृति मेरे मानस पटल पर आ रही थी। प्रवीणा की सूझ बूझ से बिगड़ा हुआ काम भी आसानी से हो गया।

——

निर्मोही साधिका

—सुश्री अमिता कुमारी जैन

हम दोनों बुआ, भतीजी थी। प्रवीणाजी बुआ थी और मैं भतीजी। एक साथ पली-पोषी, एक साथ खेली कूदी, एक साथ पढ़ी। उनका घर पर जो वात्सल्य रहा उससे भी बढ़कर वात्सल्य मुझे संस्था में मिला। मुझे प्रतिक्षण सचेत करती रहती। जब भी वे मुझे अकेली देखती शिक्षा देते हुए कहती—ज्याति का सम्बन्ध तो मात्र व्यवहार है। हमें निर्ममत्व की साधना का अभ्यास करते समय ममत्व की स्मृति के सूचक शब्दों का प्रयोग कम ही करना चाहिए। सामान्यत: वे व्यवहार में निरपेक्ष रहती, किन्तु जब भी अवसर आता वह अपना अन्तर-स्नेह उड़ेलने में संकोच नहीं करती थी।

स्वर्गवास के पहले दिन (२ अगस्त ७१) को उन्होंने मुझसे कहा था—यह जीवन दीपक-समान है, न जाने कब बुझ जाय, भावों की शुद्धि ही हमारी सही साधना है। अध्ययन मन लगाकर करना। संस्था में जो भी नियम बनाए हुए हैं उन्हें हृदय से धारण करना। यह नहीं सोचना कि यह नियम छोटा है। ये छोटे छोटे नियम ही हमें मंजिल तक पहुँचाने में सहायक बनेंगे।

एक बात उन्होंने बड़ी मार्मिक कही थी—अपने परिवार में किसी का देहावसान हो जाए तो तुम्हें मोह नहीं करना है। निर्मोह की साधना

करने के लिये ही तो हम आई हैं। तब मैने कहा—बुआ सा! आप क्या कह रही हैं? क्या किसी का पत्र आया है? अपने परिवार में किसी की मृत्यु हो गई है? उनका कहना था—नही। परन्तु······

उस समय उनकी इस रहस्यमय वाणी को मैं नहीं समझ सकी। कौन जानता था कि ये उनकी अन्तिम शिक्षाएं थीं। जीवन की अन्तिम घड़िया थीं। भयंकर मरणान्तिक वेदना हो रही थी। फिर भी अपने कर्त्तव्य के प्रति सजग हो उन्होंने मुझे याद करते हुए कहा—अमिता! मैं तो उपर जा रही हूँ, तुम भी चलती हो क्या? मैंने कहा—नहीं बुआसा! मुझे तो नहीं जाना है, आप ही पधारें। मुझे तो आप जाते समय ऐसी आत्म शक्ति दें जिससे मैंने जो पथ अपनाया है उस पर उत्तरोत्तर बढ़ती जाऊं।

अन्तिम समय में दी गयी उनकी वे अमूल्य शिक्षाएं आज भी मेरे कर्ण कुहरों में गुंजायमान है और मुझे सात्विक संबल प्रदान करती रहती हैं।

——

जीवन किरण

स्व० प्रवीणा की अमर जीवन झांकी

•

—श्री पूनमचन्द सेठिया

आसमान से वातें करने वाले प्रकृति को मन मोहक छटा प्रदान करने में सक्षम स्वर्ण रशिमयों को संजोये अनगिन टीवों से घिरा हुआ एक छोटा किन्तु सुन्दर ग्राम मोमासर है। विक्रम सं० २०१० की भाद्रव कृष्णा ४ की मंगल प्रभात में श्री कोड़ामलजी सेठिया को धर्म पत्नी श्रीमती चन्द्रावल देवी सेठिया ने एक होनहार कन्या को जन्म दिया। घर का वातावरण शान्त और गंभीर था। श्रीमान कोड़ामलजी के देहावसान को मात्र दो महिनें का अल्प समय ही हुआ था, विषाद एवं क्षोभ के वीच इस कन्या का आगमन संतोष का कारण वना। निश्चित समयानुसार वालिका का नाम करण संसकार सम्पन्न हुआ। उसे चम्पा के नाम से सम्वोधित किया गया। चम्पा के सुन्दर पुष्प के समान ही तो वह प्रिय थी।

समय का रथ द्रुत गति से गतिशील होने लगा। रथ के पहिए दिन, महिनें एवं वर्षो की दूरी को चीरते हुए दौड़ने लगे। चम्पा ने भी किशोर अवस्था में प्रवेश किया। एक भाई और तीन वहिनों में चम्पा सबसे छोटी थी। बड़ी वहिन श्रीमती विजया देवी का विवाह श्री खुमाणचन्द जी पटावरी के साथ हो गया। श्री खुमाणचन्द जी पटावरी मोमासर के सुविख्यात श्रावक श्री जालमचन्दजी पटावरी के पोत्र हैं। दूसरी

बहिन सुश्री मोहनीकुमारी सेठिया ने गंगानगर में वि० सं०२०२३ चैत्र शुक्ला १३ को परमाराध्य गुरुदेव के कर कमलों से दिक्षा ग्रहण की। यह धर्म संघ में साध्वी श्री मंजुबाला बन गई।

चम्पा नोहर के श्रीमान नथमलजी बांठिया की दोहिती थी। बांठिया परिवार सुप्रतिष्ठित परिवार है। आज भी कालिम्पोंग में इस परिवार की अच्छी साख है। श्री K. C. Banthia इस परिवार के जाने माने व्यक्ति है जिन्हें कालिम्पोंग क्षेत्र में अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त है। श्री पूनमचन्दजी गुजरानी (सरसा) चम्पा के मामा है।

चम्पा का बचपन मोमासर में ही बीता। माँ एवं भाई-बहिनों की लाडली होने से स्नेह के साथ उसे सब कुछ मिला जिसकी उसे अपेक्षा थी। वात्सल्य एवं दुलार की छाया में चम्पा बड़ी हुई। उसे स्थानीय कन्या विद्यालय में शिक्षण हेतु भर्ती किया गया। अपने अध्ययन काल में बड़ी लग्न एवं निष्ठा के साथ माध्यमिक तक की शिक्षा प्राप्त की।

प्रकृति ने अपना पूर्ण सौन्दर्य चम्पा को हस्तांतरित कर दिया। उसका इकहरा शरीर, बड़ी-बड़ी आंखे, सौम्य आकृति, गौर वर्ण एवं दर्शक को आकर्षित करने वाला शारीरिक गठन उसके बाह्य व्यक्तित्व की स्पष्ट रेखाएं थीं। कौन जानता था इन सबके पीछे, भविष्य के गर्त में अगणित परतें छिपी हुई हैं, जो इस वीर बालिका के जीवन को दिव्य व्यक्तित्व के रूप में गढ़ने वाली हैं।

परिवार का धार्मिक वातावरण उसे विरासत में प्राप्त हुआ था। बहिन मोहनी (साध्वी श्री मंजुबालाजी) की वैराग्य भावना, उसका पारमार्थिक शिक्षण संस्था में शिक्षण, साधना और तदनन्तर सदाके लिए संसार से विमुख हो कर संयम जीवन स्वीकार करना आदि ऐसी घटनाएं थीं जिनकी चम्पा के बाल जीवन पर वैराग्य की अमिट छाप अंकित होती

रही। उसके मन में धर्म के प्रति अनुराग जाग गया। संयोगवश विनय निष्ठा साध्वी श्री हुलासांजी (सरदारशहर) एवं उनकी सहवर्ती साध्वी श्री कमलाकुमारीजी (उज्जैन) के प्रेरक सत्संग से वैराग्य के अंकुर प्रस्फुटित हुए। साध्वियों के सतत् सानिध्य से वैराग्य के अटूट विचारों की शृंखला तैयार हुई। उसने अपनी वहिन मोहनी के पथ का अनुगमन करने का निश्चय कर लिया। उसके इस आकस्मिक निर्णय को सुनकर परिवार को आश्चर्य होना ही था, क्योंकि माता एवं भाई की वह छोटी एवं लाडली वहिन थी। बड़ी वहिन मोहनी की दीक्षा के पश्चात साधारणतः सवका उसके प्रति विशेष स्नेह हो गया था। मैं (भाई पूनमचन्द सेठिया) उसके विचारों से सहमत नहीं था। मैंने उसे कड़े, मीठे, कोमल-कठोर आदि साधनों एवं विचारों द्वारा वैराग्य से डिगाने का प्रयास किया। सांसारिक सुखों की ओर आकृष्ट करने हेतु उसे अनेकानेक भौतिक प्रलोभन भी दिये गये। संयम-जीवन की कठिनाईओं का दिग्दर्शन कराते हुए उसे संयम के निश्चय को सदा के लिये त्यागने हेतु मजबूर भी किया गया। उसके इस निश्चय का उपहास भी उड़ाया गया लेकिन कठिन परीक्षाएं उसके जीवन में नये उन्मेष लाने वाली साबित हुईं। वह नये तपे हुए स्वर्णकी तरह निखर कर खरी साबित हुई। मैंने आज्ञा देने में विलम्ब करके उसके धैर्य का परीक्षण किया। अनेक अपेक्षाओं एवं उपेक्षाओं के वीच शान्ति एवं सहिष्णुता में गोते लगाती हुई चम्पा ने अन्त मे सफलता को वरण किया। वि० सं०२०२५ की श्रावण शुक्ला २ को पारमार्थिक शिक्षण संस्था में प्रवेश मिला, जहाँ रह कर उसे संयम जीवन जीने की पृष्ठ भूमि तैयार कर साधना मे समर्पित होना था। आचार्य श्री तुलसी की शिष्या वनने एवं आत्म कल्याण हेतु संयम व्रत स्वीकार करने की तैयारी की प्रक्रिया में वह मनोयोग से जुट पड़ी। पारमार्थिक शिक्षण संस्था में चम्पा को प्रवीणा के नाम से सम्बोधित किया जाने लगा। वहाँ शिक्षण संस्था में प्रवीणा सचमुच प्रवीण ही निकली।

जीवन की महत्वपूर्ण घड़ियों में उसने संस्था को सदैव के लिये रोशन कर दिया।

प्रवीणा होनहार थी, मेधावी थी। उसने थोड़े समय में ही संस्था की दो वर्ष की परीक्षायें प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कर अपनी बुद्धि का परिचय दिया। उसके जीवन में विविध विशेषताओं का समावेश हुआ। बचपन से ही वह चंचल प्रकृति की थी जिसमें निडरता की तो मानो गहरी पुट थी। बड़ी शालीनता से वह वाक्पटुता का परिचय देती। असद् प्रवृत्ति के प्रति उसके मन में बड़ा विवेक था। उसकी साहित्यिक अभिरुचि अथाह थी। साध्वियों के स्थान में जब भी कोई कार्यक्रम होता वह अपने विचार प्रांजल भाषा में निर्भय होकर रखती। सभा के संयोजन की कला भी उसमें अद्भुत थी। मधुर वाक्यावलियों एवं सप्रसंग घटनाओं द्वारा वह सभी के मानस को प्रमुदित कर देती थी।

पारमार्थिक शिक्षण संस्था में उसके नैसर्गिक गुणों को विकसित होने का और अधिक अवकाश मिल गया। वह गाँव के मुक्त एवं स्नेहिल वातावरण से मिले गुणों को सम्वर्धित करती हुई संस्था में सबकी प्रिय बन गई। आचार्य प्रवर का वरद् हस्त, कुशल संयोजक का निर्देशन एवं सुन्दर शिक्षण व्यवस्था में प्रशिक्षण लेती हुई वह प्रति दिन प्रगति की दिशा में अग्रसर होने लगी।

प्रवीणा को संस्था में प्रविष्ट हुए लगभग एक साल हुआ था। आचार्य प्रवर दक्षिण की पद यात्रा में थे। पारमार्थिक शिक्षण संस्था भी उस समय साथ थी। इस ऐतिहासिक भ्रमण में अचानक एक ऐसी घटना घटित हुई जिसमें बहिन प्रवीणा ने सुन्दर साहस का परिचय दिया।

घटना रीटीवायल (मद्रास) की है। शिक्षण संस्था का प्रवास एक मुस्लिम भाई के घर पर था। घर के पीछे ही उनके लड़के की कब्र

थी। प्रवीणा एवं एक अन्य वहिन लघु शंका निवृति हेतु पीछे गई। अज्ञानवश उनके पैर कब्र से छू गये। तत्काल दोनों वहनें वहीं बेहोश होकर गिर पड़ीं। होश होने पर घटना के वारे में पूछताछ एवं जाँच की गई। मुस्लिम भाई से कब्र की जानकारी मिली। अज्ञानवश हुई इस त्रुटि के लिये कब्र के पास जाकर उस अदृश्य आत्मा से वार वार क्षमा याचना की। लेकिन यह अध्याय यहीं समाप्त नहीं हुआ। वह आत्मा प्रवीणा को पीड़ित करने लगी।

रात्रि में प्रवीणा को किसी हितैषी शक्ति ने सावधान रहने एवं मीठा नहीं खाने का परामर्श दिया एवं उस आत्मा के पीछे लग जाने का संकेत भी दिया। प्रवीणा इस सम्वन्ध में कुछ व्यक्त नहीं कर पा रही थी क्योंकि वह आत्मा दूर से उसे भयभीत करती एवं इस सम्वन्ध में कुछ कहने पर मार दिये जाने की धमकियाँ देती। बड़ा विचित्र योग था। सारा कष्ट पीकर रह जाना पड़ता। उसकी अस्वस्थता को मद्दे नजर रखते हुए समाजभूषण श्री जसवन्तमलजी सेठिया (मद्रास) ने संयोजक महोदय को लिखकर उसे उपचार हेतु मद्रास वुलवाया। मद्रास में चिकित्सा की अच्छी व्यवस्था थी। लेकिन कोई फायदा नहीं हो सका। दो महीने पश्चात उसके वहनोई जी श्री खुमाणचन्दजी पटावरी उसे कटिहार (विहार) ले आये। वहाँ सव तरह के औषधोपचार किये गये लेकिन निराशा ही हाथ लगी।

प्रवीणा को डायरी लेखन का शौक था। उसके वहनोई श्री खुमानचन्दजी डायरी लिखते थे। उसने उनसे डायरी का पृष्ठ दिखाने का आग्रह किया। वहिन प्रवीणा को प्रत्युत्तर में खुमाणचन्दजी ने कहा—मैं अपने पृष्ठ आपको दिखा सकता हूँ वशर्ते आप भी मुझे अपने पृष्ठ दिखायें। प्रवीणा ने वहनोई जी के तो पृष्ठ देख लिये लेकिन अपने पृष्ठ उन्हें नहीं दिखाये। संयोग वश एक दिन डायरी खुमाणचन्दजी के हाथ

पड़ गई, जिसे पढ़कर रिटिचावल वाली घटना चक्र का ज्ञान हुआ क्योंकि उस अदृश्य आत्मा के दबाव से प्रवीणा चाहकर भी उन्हें कह नहीं पा रही थी। इससे सारी घटना से परिजन अवगत हो गये। अनवरत उपचारों से प्रवीणा के स्वास्थ्य पर कोई अनुकूल असर नहीं हो रहा था। अतः एक सुविख्यात मन्त्रवादी से इस सम्बन्ध में परामर्श किया गया। इस माध्यम से उसके कष्टों को दूर करने हेतु परिजन प्रयत्नशील हुए। जिस दिन मंत्रवादी अपने प्रयत्न करने वाला था उसकी पूर्व रात्रि में प्रेतात्मा प्रवीणा के शरीर में प्रविष्ट हो गई एवं उसे विविध प्रकार से प्रताड़ित करने लगी। उसने प्रवीणा के मुंह से अनर्गल बातें भी कहलवाई। द्वितीय दिन प्रातःकाल वह आत्मा पुनः प्रविष्ट हुई प्रवीणा के शरीर में। इस समय प्रवीणा के गले में एक तावीज बंधा हुआ था, जिसे प्रवीणा ने तत्काल तोड़ डाला। बहिन विजया देवी ने इस कृत्य को देख कर प्रश्न किया—प्रवीणा ! तुमने तावीज क्यों तोड़ डाला ? प्रत्युत्तर में वह कड़क कर बोली—यह तो तावीज है, मैं तुम्हें भी तोड़ सकती हूँ। यह अदृश्य प्रेत शक्ति का प्रत्युत्तर था। प्रवीणा ने कहा—मुझे अमुक जगह पर पड़ी हुई गुरुदेव की फोटो ला देवें। उसे वह फोटो ला दी गई जिसे उसने अपने पास रखा। तत्पश्चात् वह बेहोश हो गई। बेहोशी की अवस्था में प्रेतात्मा बहिर्गमन कर जाती है। दूर खड़ी उस आत्मा से बेहोश प्रवीणा का वार्तालाप प्रारम्भ हुआ। सारे उपस्थित लोग देखकर हैरान थे, आश्चर्यान्वित और परेशान भी। विचित्र क्षण थे वे। प्रवीणा कह रही थी—मेरे पास देव, गुरु, धर्म का त्रिवेणी मंत्र है, क्या ताकत है तुम्हारे में ? है तो आओ यहाँ। वह निकट आने का असफल प्रयास करता है लेकिन तीन बार के प्रयास उसके विफल हो जाते है। प्रवीणा परिहास करती हुई बोलती है—आ गये ना ! तामिल में गालियां देकर क्या डराते हो मुझे ? मैं भी जानती हूँ थोड़ी तुम्हारी तामिल। आधा घंटा का यह दौर समाप्त हो जाता है और वह प्रेत आत्मा निराश होकर लौट.

जाती है। बेहोशी की तन्द्रा भंग होती है। प्रवीणा इस तरह अंगड़ाई मोड़कर उठती है जैसे लम्बी सुख की नींद से उठी हो। सर्व प्रथम गुरु वन्दन करती है एवं फिर सबको अपने इर्द गिर्द खड़े देख कर विस्फारित नेत्रों से देखती हुई कहती है—आप सारे क्यों खड़े हैं यहाँ? उन्होंने सारे घटना क्रम से उसे अवगत कराया। लेकिन वह कहती है मुझे तो इसका कोई पता नहीं है। प्रवीणा की निर्भीकता, देव गुरु धर्म पर अटूट श्रद्धा एवं अनन्य भक्ति से अकस्मात आया कष्ट समाप्त हो जाता है एवं वह प्रेतात्मा के चंगुल से सदा के लिये मुक्त हो जाती है। मन्त्रवादी ने द्वितीय दिवस अपने मन्त्र बल से उस आत्मा से सम्पर्क किया लेकिन उसने अपनी हार स्वीकार कर ली एवं सदा के लिये नहीं आने का वचन देता हुआ वह अपने यथास्थान चला गया। लम्बे समय तक चली इस अस्वस्थता एवं घटनावली ने उसके जीवन में नये अध्याय का श्री गणेश किया। यह अवश्य हुआ कि वह अध्ययन में कुछ पिछड़ी लेकिन उसने वह प्रशस्त मार्ग प्राप्त किया जिस पर अग्रसर होकर कोई भी गौरव प्राप्त कर सकता है। स्वास्थ्य लाभ कर वह फिर पारमार्थिक शिक्षण संस्था में लौट आई एवं संयम जीवन की उग्र भावनाओं को संजोते हुए निरन्तर साधना में रत हो गई।

समय की गाड़ी चलती रही। कोई नहीं जानता था, यहाँ तक कि प्रवीणा भी चार महीने पहले नहीं जानती थी कि कुछ ऐसा घटित होने वाला है जिसकी कल्पना करना आकाश कुसुम के सौरभ सदृश है। दिनांक १९ अप्रेल १९७१ की रात सुजानगढ़ में शिक्षण संस्था सेठिया गेस्ट हाउस में ठहरी हुई थी। रात्रि मे दो बजे किसी हितैषी देव ने प्रतिबोधित करते हुए कहा—प्रवीणा! अब तुम्हारे जीवन के चार महीने मात्र अवशेष हैं जो करना चाहो कर लो। मित्र देव की यह सूचना मानों अदृश्य भावी पर गहरी चोट थी जिसने प्रवीणा के जीवन में अवि-

स्मरणीय घटना चक्र का शुभारम्भ किया। इस विचित्र घटना से उसने अपनी सहपाठिनी बहिन सुषमा कुमारी को अवगत कराया लेकिन इसे मात्र स्वप्न या सम्भवतः इष्ट देव की पूर्व सूचना मानकर इस प्रसंग को टाल दिया गया। १८ अप्रेल यानि दो दिन बाद फिर देव ध्वनि हुई—"घबराओ मत, आखिर जाना सबको है, हाँ आवश्यक संबल लेकर जाना, तुम्हें हींच आयेगी। उससे तुम्हारा बचना कठिन है!" देव ध्वनि अदृश्य हो गई, रह गई मात्र सुगन्ध। अगले दिन यानी १६ अप्रेल को प्रवीणा के स्वर्गीय पिताजी श्री कोडामलजी सेठिया ने उसे उद्बोधित करते हुए कहा—बेटी, घबराना मत। लेकिन समय कम है, कार्य में शीघ्रता करना। बड़ा आश्चर्य हुआ प्रवीणा को, उसने कभी अपने पिताजी को नहीं देखा था। उसे लगा, अब उसके इस जीवन के दिन एक के बाद एक कम होते जा रहे हैं। बहुत अल्प समय रह गया है। वह अपनी भगिनी साध्वी श्री मंजुबालाजी से मिली। उन्हें अवगत कराया। कल्याणमलजी बरड़िया, संयोजक, पारमार्थिक शिक्षण संस्था को घटनाक्रम कह सुनाया एवं दीक्षा के लिये आराध्य देव से अनुमति दिलाने की प्रार्थना की, लेकिन श्री बरड़ियाजी उससे सहमत नहीं हुए। उसने आचार्य देव को भावपूर्ण पत्र लिखा। लेकिन वह गुरुवर (आचार्य श्री तुलसी) को नहीं मना सकी क्योंकि विधि (कर्मों) की यही विडम्बना थी। सब उससे ठोस प्रमाण चाहते थे लेकिन वह दे भी तो कहाँ से? उसने दैविक शक्ति से अनुरोध भी किया कि वह संयोजक महोदय को कोई प्रमाण दे लेकिन कोई परिणाम नहीं निकला। उसने साहस नहीं छोड़ा, वह हतोत्साह नहीं हुई। २७ अप्रेल को द्वापर में मित्र देव ने उससे कहा—"मैं तुम्हारी सहायता करूँगा अवश्य लेकिन कहूँगा नहीं किसी को।" समय बीतता गया इसी उधेड़बुन में। २७ मई ७१ को प्रातः दस बजे जब कि वह अकेली कमरे में स्वाध्याय में लीन थी एक आवाज सुनाई दी—"दो दिन तक सुवास आयेगी सो जिसको भी कहना है कह देना।"

रात्रि में वैसा ही हुआ भी, सहपाठी बहिनों को भी सुगन्ध आई। वह ग्रीष्मावकाश में मोमासर आ गई, जहाँ फिर उसे संकेत मिला—यहाँ पर तो तुम स्वतन्त्रतापूर्वक अधिक से अधिक कार्य कर सकती हो ?" उसकी डायरी के हस्तलिखित पृष्ठों में लिखा हुआ मिला कि दो आकृतियाँ स्वर्गीय साध्वी श्री हुलासांजी (सरदारशहर) एवं आचार्य भिक्षु स्वामी ने उसे दर्शन दिये। इस प्रकार वह इष्ट शक्तियों द्वारा संबोधित होती रहीं।

अन्ततः २ अगस्त १९७१ को वह रात भी आ पहुँची जिसके दूसरे दिन ३ अगस्त को उसके जीवन का साहसिक समापन होना था। लगभग आधी रात का समय था, अदृश्य ध्वनि मुखरित हुई "कल दिन के १२ बजे एक 'हींच' आयेगी। आशा कम है बचने की अतः सावधान रहना। अनशन नहीं करके एक-एक घंटे का प्रत्याख्यान करती रहना।" यह अन्तिम संदेश क्या था मानों मृत्यु का जीता जागता परवाना था। लेकिन साधना की ओर अग्रसर बहिन प्रवीण को वह विचलित नहीं कर पाया। प्रत्युत उसमें दिव्य शक्ति का अभ्युदय हुआ। वह प्रातः उठी। समस्त क्रिया कलाप नियमित रूप से सम्पन्न किये। वह उपवास करना चहती थी लेकिन संयोजक महोदय से अनुमति नहीं मिली अतः उसने प्रहर को। प्रहर आने पर थोड़ा दूध लिया। वह नियमित रूप से कक्षा में भी गई। प्रातः काल से ही सबसे क्षमा-याचना करने लगी। नये वस्त्र पहिने, यहाँ तक कि मृत्यु के बाद के लिये पहनाने के वस्त्र भी निकाल कर रख दिये। बड़ा आश्चर्य और कुतुहल हो रहा था। वह अपनी यात्रा की तैयारी अत्यन्त जागरूकता से कर रही थी। उसके मुख मंडल पर दिव्य आभा प्रस्फुटित हो रही थी। सबसे वह अत्यन्त विनम्रता से क्षमा-याचना कर रही थी। सब कार्यों से निवृत हो, वह निश्चिंत हो गई। महा-प्रयाण के लिये वह सन्नद्ध थी जैसे किसी ट्रेन पर चढ़ने को कोई तत्पर हो।
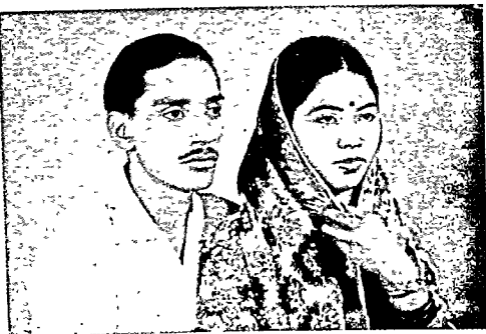
प्रवीणा के ज्येष्ठ भ्राता श्री पूनमचन्दजी सेठिया एवं उनकी भाभी विमला देवी

उसे थोड़ी प्यास का अनुभव हुआ और पानी मंगवाया। थोड़ा पानी पिया जिसकी तत्काल कै हो गई। उसे वहीं लिटा दिया गया। इलाज के लिये डाक्टर को बुलवाया गया। उसने इंजेक्सन दिया एवं बीमारी को अति साधारण बताकर वह चला गया। इधर प्रवीणा अपने लक्ष्य के निकट पहुँचती जा रही थी। उसने साध्वियों एवं आचार्य देव के दर्शन करने की इच्छा व्यक्त की। उसके एक ही तमन्ना थी कि मैं सन्यस्त बन जाऊं। साध्वियाँ मंजुबालजी आदि पधारी, मंगल पाठ सुनाया लेकिन आराध्य देव नहीं पधारे। उन्हें व्यवस्थित रूप से अवगत नहीं कराया जा सका। विधि ने मानो प्रवीणा के सर्वस्व पूज्य गुरु देव के आगे भी लक्ष्मण रेखा खींच दी थी कि वे भी उसकी बातों से विश्वस्त नहीं हो सके। इधर प्रवीणा की शारीरिक वेदना उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही थी लेकिन वीर बाला ने उफ तक नहीं किया। वेदना के गरल को मानो नीलकंठ बन कर पी लिया। निश्चल, वैचारिक-निर्मलता के इन क्षणों में लगभग २ बजकर ३५ मिनट पर एक 'हौंच' के साथ प्रवीणा का प्राण पंछी शरीर को छोड़ कर उड़ गया। सबके दिलों में अनेकानेक प्रश्न चिन्हों को, अनेकानेक भावनाओं एवं अफसोसों की लम्बी श्रृंखला थी। यह आदर्श मृत्यु सबके लिए नवीन प्रेरणाएं, नई आस्थाएं उत्पन्न करने वाली शक्ति बन गई।

मृत्यु के बाद भी लगता था जैसे बहिन प्रवीणा अब भी प्रशान्त समाधि में है। उसकी मृत्यु का समाचार विद्युत की तरह सारे शहर (लाडनूं) में फैल गया। हजारों की संख्या में लोग उस धीर बाला के पार्थिव शरीर के अन्तिम दर्शन करने के लिए उमड़ पड़े। सब नतमस्तक थे। प्रवीणा की अन्तिम यात्रा में शहर के गण मान्य व्यक्तियों के अतिरिक्त अन्य सैकड़ों स्त्री पुरुष शामिल थे। बहनोई श्री खुमाणचन्दजी पटावरी भी उपस्थित थे। देखते ही देखते प्रवीणा का पार्थिव शरीर आग की लपटों में सदा के लिये अदृश्य हो गया। लेकिन सबके मानस पर एक

अमिट छाप रह गई। उसकी शौर्य भरी यह जीवन गाथा पारमार्थिक शिक्षण संस्था के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों मे लिखी जायेगी।

यह कहानी बहिन प्रवीणा के उज्ज्वल जीवन की संक्षिप्त झांकी है, जिसने अपनी सतत् साधना, जागरूकता एवं निर्भीकता से वह कीर्तिमान स्थापित किया है जिस पर हमें गर्व है, मोमासर की भूमि को गर्व है, साधना करने वाले साधक साधिकाओं को भी गर्व है कि इस छोटी अवस्था में अपना जीवन सफल बनाया। सचमुच उसके जीवन की गौरव गाथा इतनी लम्बी है जिसे व्यक्त करना मुश्किल है। मेरी तो निरन्तर यही कामना है कि बहिन प्रवीणा स्वयं अपने लक्ष्य की ओर गतिमान बने और हमें भी चिरन्तन सत्य की प्राप्ति की दिशा में प्रेरणा देती रहे। बस इसी आशा एवं विश्वास के साथ अगणित श्रद्धा की अंजलियां समर्पित।

—: ० :—

१—वि०सं०२०१० भाद्रव कृष्णा ४ को जन्म हुआ था।

२—पिता श्री कोडामलजी सेठिया थे। उनका जब देहावसान हुआ तब वह माताजी की कुक्षि में थी। देहावसान के लगभग दो महीने बाद जन्म हुआ था।

३—भाई श्री पूनमचन्दजी सेठिया एवं बहिनें विजया देवी तथा मोहनी (साध्वीश्री मंजुबाला जी)। प्रथम बहन का सम्बन्ध मोमासर निवासी श्री खुमाणचन्दजी पटावरी के साथ हुआ, तथा दूसरी बहन की दीक्षा वि० सं० २०२३ की चैत्र शुक्ला-१३ में गंगानगर में आचार्य प्रवर के कर कमलों से हुई।

४—नित्य किये जाने वाले नियम :—

१—प्रतिदिन :—२ घन्टा ध्यान करना, १ घन्टा धूप में। नहीं तो दूसरे दिन नमक नहीं खाना।

२—प्रतिदिन :—एक सामायिक करना, जिसमें पूर्ण सावधानी रखना।

३—प्रतिदिन :—आधा घन्टा आत्मावलोकन में लगाना।

४—प्रतिदिन :—सतरह द्रव्यों से अधिक नहीं खाना।

५—प्रतिदिन :—हजार गाथा का स्वाध्याय करना।

६—प्रतिदिन :—भोजन जूठा नहीं डालना।

७—प्रतिदिन :—एक लेख व कविता बनाना।

७—प्रतिदिन :—दो घन्टा मौन रखना।

९—प्रतिदिन :—अखबार पढ़ना।

१०—प्रतिदिन :—नियमित रूप से धार्मिक पुस्तक पढ़ना (दस पृष्ठ)।

११—प्रतिदिन :—चौदह नियम चितारना, विस्तार पूर्वक व शाम

को वापस प्रतावलोकन करके दोष लगा हो तो देखना ।

१२—प्रतिदिन :—पूरे दिन में २ घन्टा के अतिरिक्त तिविहार त्याग करना ।

१३—महिनें में :—५ दिन-आधा आधा घन्टा अन्य धर्म की पुस्तक भी पढ़ना ।

१४—सभी नियमों का पूर्ण रूपेण पालन करना ।

१५—महिने में ४ दिन ऐसा चिन्तन करना कि मेरा ध्येय क्या है, मुझे किस रास्ते पर अग्रसर होना है तथा किस तरफ जा रही हूँ आदि विचार करना ।

(१) किसी भी प्राणी की विना अपराध घात नहीं करना ।

(२) निर्ममत्व भावना उत्तरोत्तर बढ़ाना ।

(३) क्रोध की प्रवृत्ति को जहाँ तक हो सके छोड़ने का प्रयत्न करना । महिनें में तीन बार से अधिक क्रोध आने पर एक दिन विगय का त्याग करना ।

(४) दूसरों के अवगुणों की तरफ ध्यान न देकर, जिनमें जो गुण हों उन्हें जीवन में उतारने की कोशिश करना । अगर दूसरों की गलती की तरफ ध्यान चला जाय (महिने में सात बार से अधिक) तो एक समय भोजन करना ।

(५) कोई अपनी गलती वताये तो सहर्ष स्वीकार करना व ज्यादा कुछ नहीं कहकर ध्यान रखूंगी, कृपा की, बस इससे ज्यादा कुछ न बोलना । अगर इसके विपरीत हो जाये तो दूसरे दिन प्रहर करना ।

(६) पाप-भीरुता रखना । बड़ों के प्रति विनय—छोटों के प्रति वात्सलता दिखाना ।

(७) जो काम स्वयं को आता हो उसे दूसरों को भी बताना ।

(८) अंहकार नहीं करना ।

(९) रोना नहीं, अगर महिने में दो बार से अधिक रो गई तो एक उपवास करना होगा।

(१०) किसी भी काम को करे, जैसे नहाना, कपड़े धोना, आदि आदि तो फेशन की दृष्टि से नहीं करना। कपड़े साफ धोये तो इस भावना से नहीं कि मैं अच्छी लगूंगी बल्कि इस भावना से कि साफ घुला हुआ कपड़ा जल्दी मैला नहीं होता।

(११) स्नान करते समय एक बाल्टी से अधिक पानी नहीं लगाना।

(१२) ३० सब्जी, ३० मिठाई से अधिक नहीं खाना।

(१३) ग्लान रोगी की सेवा करते समय घृणा के भाव न आने देना, बल्कि ऐसा विचार लाना कि धन्य है मुझे, मेरे भाग्य को जो कि मुझे सेवा का अवसर प्राप्त हुआ है।

(१४) अपने उपकारी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना।

(१५) किसी भी कार्य को करने से पूर्व चिन्तन करना।

(१६) अपने शत्रु के साथ भी मित्र का व्यवहार करना।

(१७) सभी कार्यों का तरीका सीखना, जीवन में सरलता अपनाना।

(१८) किसी विषय पर असत्य बोलने का ध्यान रखना। मजाक में कहना दूसरी बात है।

(१९) किसी की वस्तु को चोर वृत्ति से नहीं लेना।

(२०) ब्रह्मचर्य व्रत का नव बाड़ सहित पूर्ण रूपेण पालन करना।

*

काव्यमय आख्यायिका

•

—मुनिश्री नवरत्नमलजी

पद्दमय जीवन

दोहा

चली साधना के लिये, टली न पथ से तार।
'चम्पा' बढ़ते चरण में, छोड़ चली संसार ॥१॥

उपजी उर्वर भूमि में, कल्पलता अनुकूल।
विकसित हो कुछ समय में, लाई दल-फल फूल ॥२॥

उजवाला माँ दूध को, उजवाला कुल धाम।
चमकाया है विश्व में, पिता पितामह नाम ॥३॥

नाबालिग वह बालिका, साबालिक था होश।
ज्ञान साधना में रमी, ले संयम का घोष ॥४॥

घटना अचरज कारिणी, चमत्कार कर एक।
अमर बनी इतिहास में, लिख हाथों से लेख ॥५॥

गीतिका—१

(लय—लाख कोड़ को कोई न)

अकन कुमारी कन्या एक, बनी विरागिन जगा विवेक।
पारमार्थिक शिक्षण संस्था में जाकर। चम्पाबाई तो, हाँ जाकर
इतिहास अमर कर पाई है, विश्वास अटल भर पाई है ॥१॥

मोमासर में जन्म बहार, माता का पाया अति प्यार,
भाई भगिनी की लघु बहन लाडली। चम्पा······॥२॥

लिया स्वसा ने संयम भार, जगे तभी से शुभ संस्कार,
मुनि श्रमणी की सेवा में रस लेती। चम्पा बाई तो······॥३॥

जिस दिन से पकड़ा यह पन्थ, उस दिन से ही खिला वसन्त,
शिक्षा और साधना लय में पहुँची। चम्पा बाई तो······॥४॥

ले लेकर नाना संकल्प, कर लिया उसने काया कल्प,
अन्तर्मुखी दृष्टि ही एक बनाई। चम्पा बाई तो······॥५॥

तीन वर्ष तक विद्याभ्यास कर, कर पाई ऊँची क्लास
बाधाओं में कभी नहीं घबराई। चम्पा बाई तो······॥६॥

विनय क्षमा गुण ग्राहि विचार, शान्त प्रकृति-कोमल व्यवहार,
सबसे मिलती खिलती चतुर चमेली। चम्पा बाई तो······॥७॥

थी बुलन्द आवाज सन्तोल, भाषण देती थी दिल खोल,
चिन्तन और उपज से सिर डोलाती। चम्पा बाई तो···॥८॥

सूझी सब आगे की बात, लिखी डायरी में साक्षात,
मिला देव आभास दिव्य ध्वनि आई। चम्पा बाई तो···॥९॥

किया निवेदन भी दे जोर, किन्तु न किया किसी ने गौर,
रहा सभी के दिल में इसका धोखा। चम्पा वाई तो···॥१०॥

देकर पिछली सव संभाल, लेकर चली विदा खुशहाल,
क्षमा याचना कर सव ही वहनों से। चम्पा वाई तो···॥११॥

दिल में रही सुगुरु दर्शन की, कह न सकी है इच्छा मन की,
अन्तिम क्षण की घड़ियाँ तो अलवेली। चम्पा वाई तो···॥१२॥

ध्यान, मौन, जप औ स्वाध्याय, करती रही इयर में प्रायः,
खींच सार जीवन का जग में चमकी। चम्पा वाई तो···॥१३॥

नहीं साधुपन का था योग, (पर) रही भावना वड़ी निरोग,
अभय वनी, भय नहीं मौत से लाई। चम्पा वाई तो···॥१४॥

गुरु चरणों में किया मरण, लेकर गुरुतर चार शरण,
चन्देरी में चार चाँद उगा कर। चम्पा वाई तो······॥१५॥

नहीं रही वह सन्मुख आज, फिर भी हम सवको है नाज,
छाप अमिट स्वर्णाक्षर में लिख छोड़ी। चम्पा वाई तो···॥१६॥

शिक्षा लो इस उदाहरण से, प्यार करो संयम जीवन से,
तन धन यौवन क्षण भंगुर वतलाकर। चम्पा वाई तो···॥१७॥

जाता व्यक्ति न जाती वास, मिलता उससे सदा प्रकाश,
स्वर-लहरी 'नवरत्न' हृदय से गाता। चम्पा वाई तो···॥१८॥

दोहा

श्रमणी भगिनी थी वहाँ, पहुँचा पुनः 'खुमाण'।
भूआ माँ तो वाद में सुन आई गुण गान॥६॥

कुछ भी चिन्ता मत करो, धरो शान्ति प्रभु जाप।
समझो यह सौभाग्य था, छपी अनोखी छाप ॥७॥
गौरव है मुझको बड़ा, था मेरा सम्बन्ध।
पौत्री मासी की सही, छोड़ चली सु-सुगन्ध ॥८॥

—०—

गीतिका—२

दैविक आभास प्रथम, ता० १६-४-७१ सुजानगढ़

(लय—पी लो रंगा दो)

चार महिने चार महिने अब तो केवल बाकी, बाई चम्पा।
करना हो वह जल्दी करले, नहीं लंबेगी राखी। बाई चम्पा। चार ॥ध्रु॥

रजनी में निद्रा देवी की गोद में चंपा सोती।
एक आवाज दो बजे करीबन, आई ले नव ज्योति। बाई ॥१॥

"नींद में हो या जाग रही हो" अर्द्ध जगी वह बोली।
'उठ रही हूँ' अब तो ध्यान की, घड़ियां आई सतोली ॥२॥

पुनरपि ध्वनि वह 'करना सो करलो' होगा न फिर तो कुछ भी।
सुनते ही उठ पलकें घुमाई, नजर न आया कुछ भी ॥३॥

आती रही है केवल सुवाबू, लगी ध्यान में तब ही।
पर न रही है स्थिरता उस दिन, चंचल हुए मन ही ॥४॥

बार बार स्मृति उसकी आती, वाक्य यही टकराता।
सोचा आखिर क्या है माया, कुछ न समझ में आता ॥५॥

चार वजे वह ध्यान खोल कर गई घूमने बाहर।
शौचादिक से निवृत होकर, आई भारी सी होकर ॥६॥

मन में चिन्तन, तन में कम्पन, मुख की छवि कुम्हलाई।
हाथ पैर भी सन्न से दिन भर, स्थिति तो जटिल बनाई ॥७॥

अध्यापक के पास में सायं, लिये पढ़ने को आई।
पूछा उन्होंने आज 'प्रवीणा' (क्यों) मुख पर उदासी छाई ॥८॥

हल्की सी मुस्कान के द्वारा, वह शब्द 'नहीं तो' बोली।
भाव छिपाने की चेष्टा करती बात न दिल की खोली ॥९॥

पढ़कर सायं भोजन करके, ऊपर घर में पहुँची।
कहा संयोजक ने "रुपलालजी" गये मंजिल में ऊँची ॥१०॥

ध्यान लोगस्स का करके वैसी, मृत्यु की भावना आई।
"कब मैं मरूँगी" मुंह से निकला (तब) बोली दमयन्ती बाई ॥११॥

जिस दिन आयु पूरी होगी, (सुन) गुरु पद में पहुँचाई।
मुनि के पार्थिव तन को देखा, थर-थर देह कँपाई ॥१२॥

विविध कल्पना करती सोई, क्षण भर नींद न आई।
'सुषमा' बहन को दिवस दूसरे, सारी स्थिति बतलाई ॥१३॥

बोली वह मैं क्या कह सकती, कोई जंजाल ही आया।
अथवा आपके शुभ संयोग से देव सूचना लाया ॥१४॥

जीवन की उपयोगी बातें, उसने कितनी बतलाई।
जुट गई वह अपनी लग्न में भावना खूब बढ़ाई ॥१५॥

—o—

गीतिका—२

दैविक आभास दूसरी झलक, ता० १८-१-७१ सुजानगढ़

(लय—अपने पिया की मैं तो)

आई २ हो देव ध्वनि फिर कान में। प्रवीणा कुमारी लेटी एक स्थान में।
फैली खुशबू मकान में ॥ध्रु॥

अंधेरी रात ठीक दो बजे की बात है,
जागृत दशा में ध्वनि सुनी साक्षात है।
लगभग महिने चार……अवसान में ॥१॥

आयेगी 'हींच' मुश्किल बचना है जिससे,
बची तो खैर वरना डरना क्या उससे,
जाना है एक दिन……उर्ध्व स्थान में ॥२॥

आई सुवास केवल देखा न और कुछ,
'सुषमा' को कही बात करती वह गौर कुछ,
देती सलाह अच्छी……समाधान में ॥३॥

निकट आयुष्य लगता स्थिति के अनुसार है,
भावों की शुद्धि से ही होगा उद्धार है,
अधिकाधिक लगो अब……धर्म ध्यान में ॥४॥

निशा में दूसरे दिन सोयी वह सेज में,
स्वर्गीय पिता ने दिये दर्शन आहेज में,
बोले हे पुत्री, सुनो……मधुराह्वान में ॥५॥

डरो न करो कार्य जल्दी से अपना,
'हीन' में बाकी है समय थोड़ा ज्यों सपना,
(ऐसे) हुए अदृश्य कहकर···आसमान में ॥६॥

उचटा है मन उसका बड़ा सिर भार है,
रह रह करके आता दिल में एक ही विचार है,
चिन्तन का चलता चक्र······अवधान में ॥७॥

चरण बढ़ाये मैंने आगे जिसके लिये,
छोटी सी सांझ में आया अन्धड़, उसके लिये
बाधक बनेंगे क्या वे······मेरे प्लान में ॥८॥

चिन्तन किया क्या मैंने क्षण में प्रस्थान की ?
घटना का ध्यान देकर इस वर्तमान की ?
हाँ किया अवश्य किया······उपधान में ॥९॥

सोचा न होता इस विषय में उस क्षण,
(तो) करती 'अमराय माणं' पद का मैं आचरण,
भौतिक सुखों की रहती···तान मान में ॥१०॥

क्षण भर के बाद आती वही फिर भावना,
मन की रहेगी मन में मेरी क्या कामना,
करूँ मैं क्या अब कहूँ···किस स्थान में ॥११॥

इतने दिनों में इतने काटूं कर्म कैसे ?
क्या ही हो अच्छा मेरे फले भाव वैसे,
संयम पा जाऊँ छट्ठे······गुण स्थान में ॥१२॥

घेरे रहते हैं प्रश्न उसको ये हर समय,
पूरा हो लक्ष्य बस चाहता है यह हृदय,
मरने का भय नही······दरम्यान में ॥१३॥

गीतिका—४

लय—सहनाणी

उठ चली वहाँ से वह तब ही,
भगिनी श्रमणी को जाकर के, सब लिखित रूप में बात कही।
उठ चली वहाँ से वह तब ही ॥ध्रु०॥

कहा उन्होंने रात्रि समय में करती हो ध्यान धर के।
अतः परीक्षा ली हो शायद किस ही ने तेरी आकर के ॥
उदाहरण भी दिये एक दो मुनि श्रमणी के जो ध्रुव ध्यानी।
कही पिताजी की घटना जब, तब कही उन्होंने मधु वाणी ॥
संयोजक को कह दो सबही। उठ चली···॥१॥

कह दी फिर सारी स्थिति उनको, पर उन्हे नहीं विश्वास हुआ।
हो भी तो कैसे कोई भी, जब उन्हें नहीं आभास हुआ ॥
ठीक एक सप्ताह बाद में, आई आवाज करूँगा मैं।
यथा समय सहयोग तुम्हारा, पर किसको भी न कहूंगा मैं ॥
(फिर) देखा जायेगा उस क्षण पर ही। उठ···॥२॥

सोचा उसने संयोजक को, कैसे विश्वास दिलाऊँ अब।
कहा आप हैं जो भी, मुझको ज्यों यहा उन्हें भी कह दें सब ॥
अथवा सौरभ ही दिखला दें, पर हो तो कोई बात सुने।
केवल आती रही गन्ध शुभ, आगे से आगे तार बुने ॥
आई सौरभ फिर कतिवार वही। उठ···॥३॥

—०—

गीतिका—५

गुरुचरणों में एक निवेदन

(लय – चेतन २ तू प्रातः उठकर)

जीवन जीवन के तुम्हीं सहारे, अँखियों के तुम्हीं नजारे,
सुनना हृदयेश्वर ! हृदय पुकारे है,
हो करना शरणागत का उद्धार है ॥ध्रु०॥

युग प्रधान ! श्रद्धास्पद तुम हो वन्दनीय पावन हो।
सरस्वती के वरद पुत्र तुम कोविद कुल भूषण हो।
शीतल शीतल तुम चन्द्रोपम हो, तेजस्वी सूरज सम हो,
वन्दन चरणों में शत शत बार है ॥१॥

तुम लोहे को स्वर्ण बनाने वाले पारस सचमुच।
इस पापात्मा की भी इच्छा पूर्ण करोगे सब कुछ।
मुझको-२ है पूरी आशा दोगे तुम बड़ी दिलासा।
चाहती यह शिष्या संयम-भार है ॥२॥

हृदय देवता ! हृदय भावना हृदय खोल कर रखती।
मिले मुझे आभास उन्हें मैं संस्मरणों में लिखती।
अवगत-२ सब स्थिति करवाती, तन-मन सर्वस्व चढ़ाती,
तेरा इंगित मेरा आकार है ॥३॥

सादर सविनय सांजलि करती अनुनय रखकर आस्था।
रख भविष्य का ध्यान दिखाओ वर्तमान का रास्ता।
निश्चित-२ तुम गौर करोगे, मेरी सम्भाल लोगे,
टूटे ही जाते दिल के तार हैं ॥४॥

सूना सब संसार लग रहा, मन उचटा-सा रहता।
इसकी नश्वरता का नाटक दिन भर सम्मुख रहता।
नौका-२ मझधार पड़ी है, भक्ता कर जोड़ खड़ी है,
तेरे हाथों में यह पतवार है ॥५॥

उचित आप समझें जैसा ही वैसा ही करवाएँ।
हुई समर्पित मैं गुरु पद में इसको अब अपनायें।
तुमही २ हो पतितोद्धारक, तुम ही जन्म सुधारक,
तेरा ही इसको अब आधार है ॥६॥

यह अबोध बाला है भगवन ! कुछ भी समझ न पाती।
इस प्रकार की स्थिति में बिल्कुल घबराती ही जाती।
होगा-२ जिस पथ का दर्शन, उसका कर लूँगी स्पर्शन,
चलने को चरण चिन्ह तैयार है ॥७॥

दोहा

एक रोज "क्या कर रही हो" की आई फिर आवाज।
दृग्गोचर कुछ भी नहीं, खुशबू रही विराज ॥१॥
पत्र एक उसको मिला, जो था बिल्कुल झूठ।
माँ पहुंची परलोक में, देकर तुमको पूठ ॥२॥

गीतिका—६

स्वप्न-उदबोधक झलक

(लय-घोर तपसी हो)

स्वप्न आया रे, शुभ स्वप्न आया।
"माँ से मिल लो" यह घोष लाया रे ॥शुभ॥ध्रुव॥

सोचा उसने मेरे मन में, यही विचार रहाया रे ॥ शुभ ॥
इसीलिये सम्भवतः ऐसा, स्वप्न मुझे दिखलाया रे ॥शुभ...॥

दर्शन दिये पिताजी ने फिर, सिर पर हाथ रखाया रे।
खिला रही मां मधुर चूरमा, फूल रही है काया रे ॥२॥

कहा उन्होंने मां से ऐसा, सहज प्रसंग मिलाया रे।
"जाता मैं तुम इसे खिला दो" चूरमा यह मन भाया रे ॥३॥

सेवा कर लो अभी यहां यह, स्वप्न सभी यह गाया रे।
टूटी नींद खुली हैं आंखें, समय सुबह का आया रे ॥४॥

हेम नवरसा पढ़ते-२ उसने जिक्र चलाया रे।
होगा झूठा पत्र "माँ वाला" अनुभव ऐसा पाया रे ॥५॥

पूछा बहिनों ने तब उसने, सब वृत्तान्त बताया रे।
पत्र खुशी का दिवस दूसरे, जननी का पहुँचाया रे ॥६॥

उसी रोज फ़िर मध्य दुफेरे, विस्तर एक बिछाया रे।
लेटी चन्द क्षणों के खातिर, तत्क्षण शब्द सुनाया रे ॥७॥

आज व कल खुशबू आयेगी, रखना ख्याल सवाया रे।
कहना जिन्हें उन्हें कह देना, जम जायेगा पाया रे ॥८॥

उसी समय उठकर पढ़ने में उसने ध्यान लगाया रे।
(जब) सुरभि निशा में सचमुच आई (तब) दो बहिनों को जगाया रे ॥९॥

"सुमन" बहन तो जाग रही थी, सुन्दर मेल मिलाया रे।
साथ "प्रविणा" के तीनों ने, सौरभ स्वाद चखाया रे ॥१०॥

"पड़ियारे" की है यह घटना, अद्‌भुत दैविक माया रे।
सवा मास अवकाश हेतु वह, पाई घर की छाया रे ॥११॥

गीतिका—७

पुनरपि प्रेरणा

(लय—जीवन का एक सहारा)

दो दिव्य मूर्त्ति दिखलाई, मधुरी आवाज सुनाई है।
प्रतिदिन की भाँति सवाई, फिर यही प्रेरणा लाई है ॥ध्रु०॥

है अधिकाधिक शुभ कार्य यहाँ पर, अब कर सकती हो ना।
है हो स्वतन्त्र घट सुकृत सुधा का, अब भर सकती हो ना ॥१॥

है नहीं बात कहने से पहले, चेहरा स्पष्ट दिखाया।
है किन्तु बाद में पूर्ण रूप से, दृग् गोचर बन पाया ॥२॥

है साध्वी एक "हुलासाजी" सरदारशहर वाली।
है तथा दूसरे सन्त पास में उनकी छटा निराली ॥३॥

है ऊँची-ऊँची पहन रखी थी, खुला बदन ऊपर का।
है थोड़ी ज्यादा कम लम्बी, मुंह पटी रूप मुनिवर का ॥४॥

है गोल और चमकीली आँखें, खिली भाग्य की रेखा।
है लेकिन दोनों के ही कर में, नहीं धर्म ध्वज देखा ॥५॥

है उसने दर्शन किये स्वप्न में, बोले तब वे तत्क्षण।
है नहीं रहे हैं अहो साधु हम, न करो अब तुम वन्दन ॥६॥

है दृष्टिगोचर हुए बाद में, सुरभि तेज बहु आई।
है लिए एक क्षण के ही केवल, कली-कली विकसाई ॥७॥

दोहा

सेवा में गुरुदेव की, पहुँची फिर सोल्लास !
भावी जीवन की भली, देख रही है राह ॥१॥

गीतिका—८

अन्तिम क्षण

(लय—भला किसी का कर न सको)

हँसती २ चली 'प्रवीणा' करके पूरी तैयारी।
खड़ी देखती रही पास में, संस्था की बहिनें सारी ॥ध्रु०॥

आठ बजे 'चम्पा' ने 'सुषमा' और 'प्रभा' को बतलाया।
दर्शन हुए भिक्षु के मुझको घोष मन्त्रणा मय आया।
गत रजनी की घटना है यह सचमुच रोमांचितकारी ॥१॥

बारसको (कल) बारह बजते ही 'हींच' भयावह आयेगी।
बचनेकी कम आशा उससे, (वह) खींच तुझे ले जायेगी।
रहना सजग त्याग करना है, घड़ी-२ का हितकारी ॥२॥

अपना सारा कार्य समेटा, पहले से ही चिन्तन कर।
जो भी चीजें देनी जिनको, दी उसने उसको सत्वर।
क्षमा याचना किया सभी से, खोल हृदय की अलमारी ॥३॥

दोहा

कुछ दिन पहले ही कहा, बहनों को साह्वान।
चरम समय नजदीक, है. रखना पूरा ध्यान ॥१॥

मां को कहना मोहवश, न करे मेरा शोक।
हरे वस्त्र पहने नहीं, दें सब ही को रोक ॥२॥

वस्त्र न पहनाना मुझे, पीछे से रंगीन।
रखे स्वयं ने हाथ से, वस्त्र निकाल नवीन ॥३॥

ले लेना तुम पैन वह, जो सतियों के पास।
और बड़ी सन्दूक भी, लेना मेरी खास ॥४॥

—०—

(लय—मूल)

इच्छा थी उपवास करूँ, पर कह न सकी संयोजक से।
अतः प्रहर की, पिया दूध, फिर साविधि त्याग किये मुखसे।
सामायिक ले ध्यान ध्या रही, कर चिन्तन से इतकारी ॥४॥

पौने बारह बजे कह रही, बहिनों! सलिल पिलाओ तुम।
उल्टी हुई पिया पानी तब, बोली मुझे सुलाओ तुम।
बैठा नहीं रहा जाता है, बड़ी वेदना चिनगारी ॥५॥

सो जाने के बाद जरा सा, छूता पैर अगर कोई।
कहती दर्द हो रहा काफी, मत छुओ मुझको कोई।
खोलो आँखें, सुन न रही है, खड़े द्वार पर प्रतिहारी ॥६॥

बजे सवा बारह डाक्टर ने, इंजेक्शन भी एक दिया।
दवा साथ में एक और थी, उसने धृति से उसे लिया।
माताजी को कहो बुलाएँ। कर दी उसने इन्कारी ॥७॥

बजे घड़ी में दो के लगभग, घोर वेदना थी उसके।
बैठी निकट भतीजी अमिता कहती है उसको हँसके।
विराज रही हो क्या तुम उपर, सुन बोली वह सुकुमारी ॥८॥

"सुखासा" क्या आप कह रहीं ? बोली पुनरपि वह भगिनी।
मैं उपर जा रही तुम्हें भी, चलना क्या उपर भगिनी ?
उसने कहा आप ही जाएँ, शक्ति मुझे देकर भारी ॥९॥

पीड़ा भीषण थी रू रू में, पर न निकाला उफ मुख से ।
लेटी रही शान्त मुद्रा में, समाधिस्थ होकर सुख से ।
सतियों ने दर्शन दे मंगल-पाठ सुनाया प्रियकारी ॥१०॥

कहा 'प्रवीणा' 'स्वामीजी' खड़े सामने दीख रहे ।
पीली मुख पति बंधी मुझे वे, झाला देकर बुला रहे ।
हँसने लगी सभी ही बहनें, कहो कहां वे अवतारी ॥११॥

दोहा

पुनरपि कहती ही गई, उपर वाली बात ।
बिस्मित तो सब ही रहे, कुछ न हो रहा ज्ञात ॥५॥

(लय—मूल)

गुरु दर्शन करवाए मुझको, करना एक निवेदन है ।
भोजन का है समय अभी तो, मुश्किल होने दर्शन है ।
बहनें गई तीन पर गुरुवर, आ न सके अतिशय धारी ॥१२॥

जब तुम स्वामीजी के दर्शन, स्पष्ट कर रही हो ऐसे ।
तब आचार्य प्रवर के दर्शन, कहो करोगी तुम कैसे ?
दोनों के ही कर लूँगी मैं, भर लूँगी समरस क्यारी ॥१३॥

दोहा

क्या है अन्तर भावना ? दीक्षा की ही एक ।
गुरु दर्शन करके करू, विनती उन्हें सविवेक ॥६॥

(लय—मूल)

अन्तिम क्षण में व्यथा भंयकर, कंपित तन रोमावलियाँ ।
लगी पकड़ने उसको बहनें, तब उसने इन्कार किया ।
प्राण पखेरु उड़े पलक में, गिरा वदन से कुछ वारि ॥१४॥

नहीं विकृति चेहरे पर कोई, हो न रहा विश्वास खड़ा ।
नहीं प्राण है इसमें, आखिर, करना ही विश्वास पड़ा ।
अकल्पित इस घटना को सुन, चकित हुए सब नर नारी ॥१५॥

नया एक, अध्याय जोड़कर, संस्था से वह चली गई ।
मधुर-२ संस्मरण छोड़कर, स्वर्ण पंक्ति लिख गई नई ।
युग युग तक यह अमर रहेगी अंबर में ज्यों ध्रुवतारी ॥१६॥

—०—

गीतिका-९

आचार्य श्री के उद्गार, स्मृति सभा

(लय—बाजरे की रोटी)

पारमार्थिक शिक्षण संस्था का, गौरवमय इतिहास बना ।
जन जन में श्रद्धा बल लाया, बहन 'प्रवीणा' का सपना ॥ध्रु॥

अकल्पित स्मृति सभा जुड़ी है, इसकी पुण्य मृत्यु पर जब ।
निकले हैं उद्गार हृदय के, 'तुलसी' प्रभु के मुख से तब ।
(मैं) स्वप्न देव ज्योतिष पर ज्यादा, गौर न करता सहज मना ॥१॥

कोई कुछ कहता आकर तो मध्यवृत्ति से सुन लेता ।
अधिक भरोसा रख पौरुष पर, उसे महत्व नहीं देता ।
पर परिवर्तन आया थोड़ा, सुनने से कल की घटना ॥२॥

रखी 'प्रवीणा' ने साहस से, सारी स्थिति मेरे सन्मुख ।
नहीं हुआ विश्वास क्योंकि, जब प्रकट नहीं आभास अमुक ।
सोचूं—अविश्वास बहनों का, अब न करूंगा मैं इतना ॥३॥

है प्रसन्नता मुझे बड़ी ही, उसका हुआ समाधि मरण ।
बाद मृत्यु के भी मुख उसका, लगता मानो खिला सुमन ।
हुआ प्रभावित शान्ति मूर्ति को, देखी जब विकसित नयना ॥४॥

थी सौभाग्यशालिनी निश्चित, मंगल मरण हुआ जिसका ।
बिरली ही आत्माएँ ऐसी, मृत्यु महोत्सव हो जिनका ।
किन्तु खेद सही स्थिति न पहुँची, दर्शन देता, मैं वरना ॥५॥

बिना किये स्वीकार साधुव्रत, वह आदर्श मृत्यु पाई ।
पुण्य मृत्यु मैं उसे मानता, शुद्धि भावना में लाई ।
अतः शोक संताप किसी को, किंचित मात्र नहीं करना ॥६॥

क्यों न किया दीक्षित उसको, यह सहज प्रश्न हो सकता है ।
बिन क्षयोपसम चरित्र मोह के, कोई न मुनि हो सकता है ।
तीव्र भावना देख लग रहा, आया उसको साधुपना ॥७॥

संस्था के सुनहले ग्रन्थ में, जुड़ा एक अध्याय नया ।
वास्तव में ही पुण्यशालिनी, संस्था बनी धर्म सवया ।
जहां साधना करती बहनें, मान रही गौरव अपना ॥८॥

ऐसी घटना कट्टर नास्तिक-दिल में प्रश्न खड़ा करती ।
आत्मा पुनर्जन्म कर्मादिक, तत्वों में आस्था भरती ।
आस्तिक जन को सिखलाती है, संयम तपका रस चखना ॥९॥

तेरापन्थ संघ सौभागी, गौरव शाली परम्परा ।
ऐसी रोचक घटनाओं से, है इसका इतिहास भरा ।
कडी जोड़ दी एक इसी में, बहन प्रवीणा ने सघना ॥१०॥

मोमासर उसका जन्म स्थल, मेरा भी तो मोमासर।
मोमासर में चर्तुमास है, रचना स्थल भी मोमासर।
नव ढ़ालें 'नवरत्न' सुनाता गाता मुक्त स्वर स्तवना ॥११॥

दोहा

रचना का आधार है, उसकी पुस्तक मूल।
मिथ्या दुष्कृत कर रहा हुई कहीं यदि भूल ॥१॥

दशमी कृष्णा कार्तिकी, आठ बीस की साल।
बुद्धवार दिलदार है, अमृत भवन सुविशाल ॥२॥

जय जय शासन वीर का, जय जय शासन छत्र।
जय जय साधक संयमी, जय-जय ध्वनि सर्वत्र ॥३॥

—: संपूर्ण :—